चन्दामामा
जून १९६४

जून १९६४

विषय - सूची

★

एक प्रति ६० नये पैसे — वार्षिक चन्दा रु. ७-२०

सफ़र में
बड़ा ही
मजा
आएगा...
Salts
जे. बी. मंघारामके
बिस्कुट
जे. बी.
मंघाराम
एण्ड कम्पनी

जेठ की दुपहरी का सुखद स्वप्न...

केसल्स से सज्जित एक महल!

कितना सुखमय, कितना शीतल!

विक्रय - कर्ता :

बजाज इलेक्ट्रिकल्स लिमिटेड

४५-४७ वीर नरीमान रोड, बम्बई-१

टिनोपाल की

अधिक सफ़ेदी से आप की कमीज़ें चमक उठती हैं

अपने सफ़ेद कपड़ों की धुलाई में टिनोपाल मिलाइये और, फिर देखिये एक अनोखा फ़र्क़! हर कपड़ा जगमगाता सफ़ेद, चमकदार और उजला होता है! कमीज़ें, पतलूनें, धोतियां, बच्चों के कपड़े, चादरें और आप के सारे सफ़ेद कपड़े टिनोपाल की अधिक सफ़ेदी से चमक उठेंगे!

नए किफ़ायत मूल्य डिब्बे में आज ही टिनोपाल खरीदिए। बाल्टी भर कपड़ों के लिए केवल ¼ छोटा चम्मच टिनोपाल काफ़ी है।

थोड़ा सा टिनोपाल सफ़ेद कपड़ों को अत्यधिक सफ़ेद बनाता है

टिनोपाल जे. आर. गायगी, एस. ए. बाल, स्विट्ज़रलैंड का रजिस्टर्ड ट्रेड मार्क है।

भारत में बनानेवाले: सुहृद गायगी लिमिटेड, वाडी वाडी, बड़ौदा।
बिक्री कार्यालय: [illegible] बिल्डिंग, फ़ोर्ट, बम्बई 1-बी.आर.

चन्दामामा
संचालक: चक्रपाणी
"भयंकर घाटी" की कहानी समाप्त हो रही है। "चन्दामामा" में प्रकाशित धारावाहिक कहानियाँ, बहुत लोक प्रिय रही हैं। "भयंकर घाटी" की लोकप्रियता, जैसा कि हमें मिले पत्रों से स्पष्ट है, और भी असाधारण रही है।
भविष्य में प्रकाशित होनेवाले धारावाहिक और भी अधिक आपका मनोरंजन कर सकेंगे, ऐसी हमारी आशा है।
वर्ष: १५ जून १९६४ अंक: १०

भारत का इतिहास

खानदेश :

मोहम्मद बिन तुगलक के साम्राज्य में खान देश एक भाग था। उसके शासक मलिक राजा फारूकी ने, फिरोज खान के बाद जो गड़बड़ी हुई, उसमें अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया था। २९ अप्रैल १३९९ में इसके मर जाने के बाद, इसका लड़का मलिक नसीर गद्दी पर आया। बहमनी सुल्तानों ने इससे गुजरात ले लिया। १४३७-३८ में यह मर गया। १४३८ से १५०१ तक खान देश पर इसके लड़के और पोते राज्य करते रहे। आखिर गुजरात की तरह खान देश भी १६०१ में अकबर के साम्राज्य में आ गया।

बहमनी राज्य :

दिल्ली सल्तनत की खिलाफत करनेवाले मुस्लिम राज्यों में सब से अधिक बलवान दक्खिन का बहमनी राज्य था। यह तुगलक के समय में स्वतन्त्र हो गया था। दक्खिन के प्रमुखों ने दौलताबाद को वश में करके, अपने में से एक अफगान को नासिरुद्दीन शा नाम से गद्दी पर बिठाया। यह राज्य न कर सका, उसने स्वयं गद्दी जफरखान को दे दी। ३, अगस्त १३४७ में अबुलमुजफ्फर अलाउद्दीन बहमन शा नाम से अपना राज्याभिषेक करवाया। इसकी सन्ततिवाले ही बहमनी सुल्तान थे।

इसने अपनी राजधानी गुल्बर्गा बनाई। उसने उन हिन्दू राजाओं को परास्त किया, जिन्होंने उसका शासन स्वीकार नहीं किया था। ११, फरवरी १३५८ में जब वह मरा, तो उसका साम्राज्य उत्तर में वेन गंगा से दक्षिण में कृष्णा तक, पश्चिम में

दौलताबाद से पूर्व में भुवनगिरि (तेलंगाना) तक फैला हुआ था। इसने मरते समय अपने लड़के को अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया। उसका नाम था, मुहम्मद शा।

१३७७ में मोहम्मद शा के मरते ही उसका लड़का मुजाहिद शा जब गद्दी पर आया, तो उसने विजयनगर पर हमला किया। पर वह उसको वश में न कर सका, विजयनगर के राजा से सन्धि करके चला आया। इसके बाद मोहम्मद शा द्वितीय गद्दी पर आया।

इसके बाद १३९७ के नवम्बर मास में सुल्तान ताजुद्दीन फिरोज शा ने विजयनगर के राजा और दक्षिण के और हिन्दू राजाओं से युद्ध किया। विजयनगर की राजकुमारी को जबर्दस्ती अपने अन्तःपुर में रख लिया। परन्तु १४२० में यह विजयनगर के राजा के द्वारा पानगल के पास परास्त किया गया। इस पराजय का प्रतीकार करने के लिए इसके भाई महमद शा ने गद्दी पर आकर विजयनगर से भयंकर युद्ध किया और उनको हराया। १४२४ में इसके सेनापति ने वरंगल पर हमला किया। वहाँ के किले को काबू में कर लिया। वहाँ के राजा को मार दिया। अहमद शा १४३५ में मर गया।

इसके बाद बहमनी राज्य में फूट पड़ गई। मुसलमानों में शिया और सुन्नियों में भेदभाव होने लगा। कितनी ही साजिशें और बगावतें हुईं। फिर भी १५२७ तक बहमनी राजाओं का शासन चलता रहा।

दक्खिन के सुल्तान :

बहमनी साम्राज्य के विधान के बाद दक्खिन में पाँच सल्तनतें बनीं। ये थीं, बरार में इमाम शाही, अहमद नगर में निजाम शाही, बीजापुर में आदिल शाही,

गोल्कुण्डा में कुतुब शाही और बीदर में बारीद शाही।

१४८४ के शुरु में बीरार स्वतन्त्र हुआ। यह १५७४ में अहमद नगर में मिला दिया गया। १४८९-९० में यूसुफ आदिल्खान ने बीजापुर की स्वतन्त्रता घोषित की। आदिल शाही वंश में इसके बाद, उल्लेखनीय सुल्तान था, इब्राहीम आदिल शा। १६८६ में औरंगजेब ने बीजापुर को वश में कर लिया।

अहमद नगर की आजादी घोषित करनेवाला था अहमद। (१४९०) १४९९ इसने दौल्ताबाद को जीतकर अपने राज्य को शक्तिशाली बनाया। अहमद शा के काल में ये बातें उल्लेखनीय हैं। निजाम शा ने बीजापुर का विरोध करने के लिए विजयनगर का हाथ पकड़ा इसके बाद आनेवाले सुल्तान ने १५६५ विजयनगर के विरुद्ध किये गये साजिश में शामिल हुआ। १५७६ में अकबर के लड़के मुराद के आक्रमण का चान्द बीबी ने खूब मुकाबला किया। १६०० में मुगलों ने इस पर हमला किया। १६३३ में शाहजहाँ ने इसे अपने राज्य में मिला लिया।

बहमनी सुल्तानों द्वारा नष्ट वीरंगल राज्य के खण्डहरों पर गोल्कुण्डा सल्तनत की नींव पड़ी। इसके शासक कुतुब शा वंश का संस्थापक था, कुलीशा। १५६५ में विजयनगर के विरुद्ध जो साजिश हुई थी उसमें इसका लड़का इब्राहीम भी था। इसने हिन्दुओं को ऊँचे ऊँचे पद दिये।

१६८७ में औरंगजेब ने गोल्कोन्डा को घेरा और उसे जीतकर मुगल साम्राज्य में मिला लिया।

प्रह्लाद
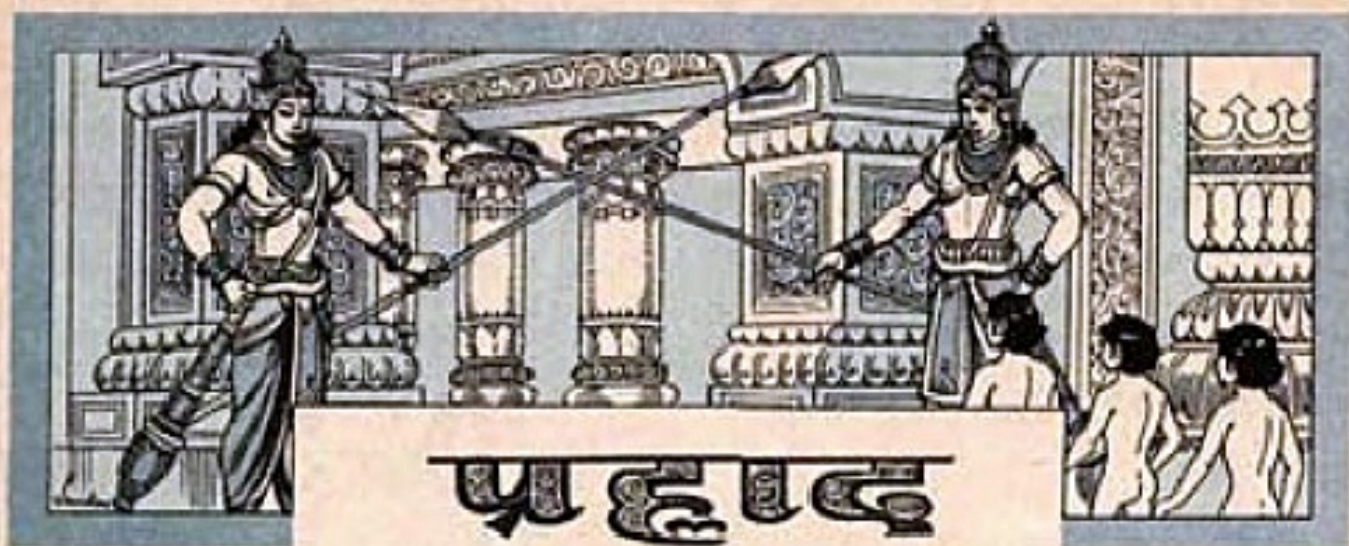
ब्रह्मा के मानस पुत्र सनत, सनन्द, नाद, तीनों लोकों में घूमते घूमते एक दिन यूँहि विष्णु लोक में पहुँचे। पाँच वर्षों के बच्चों की तरह दिगम्बर उन महामुनियों को देखकर, विष्णु के द्वारपालक जय और विजय ने उनको रोका और अन्दर जाने नहीं दिया। इस पर वे मुनि रूठ गये और उन्होंने शाप दिया कि वे राक्षस रूप में जन्म लें।

शाप से डरकर, जय विजय ने मुनियों से प्रार्थना की कि वे उन्हें शाप विमुक्त कर दें। मुनियों ने यह रियायत कर दी कि तीन जन्मों के बाद, वे फिर से विष्णु लोक आ सकें। वे फिर अपने मार्ग पर चले गये। इस शाप के फल स्वरूप कश्यप और अदिति के यहाँ, हिरण्यकशिप और हिरण्याक्ष के रूप में पैदा हुए।

हिरण्याक्ष को युद्ध से प्रीति थी, उसने युद्ध के लिए वरुण आदि को ललकारा। पर कोई भी इसके लिए तैयार न हुआ। जब उसने भूमि को घुमाकर, पाताल में फेंक दिया, तो विष्णु ने वराह अवतार लेकर भूमि को ऊपर निकाला। हिरण्याक्ष वराह से भिड़ पड़ा और युद्ध में मारा गया।

हिरण्यकश्यपु को यह सुन बड़ा गुस्सा आया कि विष्णु ने उसके भाई को मार दिया था। उसने दानव वीरों को उत्तेजित करते हुए कहा—"गुप्त रूप में आकर, जिस विष्णु ने मेरे भाई को मारा है, मैं उस विष्णु को अपने भाले पर चढ़ाकर, उसके खून से, अपने भाई का तर्पण

अन्तिम पृष्ठ

करूँगा। इस बीच तुम संसार में घूम घामकर, जो जो, तपस्या, यज्ञ, वेदाध्ययन, व्रत, दान, आदि कर रहे हों, उन सब को मार दो, उन सब गाँवों को जला दो, जो गौ, ब्राह्मण, पूजा करते हों, वर्णाश्रम का पालन करते हों।"

राक्षस अन्धाधुन्ध घूमने लगे और लोगों की हत्या करने लगे। उन्होंने नगर, ग्राम, राजधानी, बाग, बगीचे, खेत, आश्रम, सब नष्ट कर दिये।

हिरण्यकश्यपु ने अपने मृत भाई का दहन संस्कार किया। अपनी माता और भाई की पत्नी को और उसके बच्चों को आश्वासन दिया। ताकि कभी उसका पराजय न हो, कभी वह बूढ़ा न हो, कभी वह न मरे और सारे संसार का राजा हो सके वह तपस्या करने लगा।

उसने मन्दरगिरि की घाटी में पैर के अंगूठे पर खड़े होकर, हाथ ऊपर करके, कठिन तपस्या की, उसके शरीर की ऊष्णता सारे संसार में फैलने लगी। समुद्र कल्लोलित हो उठे। भूमि काँपने लगी।

देवता हिरण्यकश्यपु की तपस्या न सह सके, वे ब्रह्मलोक भाग गये। उन्होंने ब्रह्मा

से प्रार्थना की कि जैसे भी हो, वह हिरण्यकश्यपु की तपस्या भंग कर दे। इसके लिए ब्रह्मा मान गया।

ब्रह्मा ने जब जाकर देखा, तो उसे यह भी न पता लगा कि हिरण्यकश्यपु कहाँ था। उसके चारों ओर बाम्बी बन गई थी। उस पर घास और बाँस उग आये थे। हिरण्यकश्यपु के शरीर को चीटियों ने खा लिया था।

ब्रह्मा ने उसकी स्थिति देखकर, चकित होकर कहा—"हिरण्यकश्यपु, तुम्हारी तपस्या सफल हो गई है। उठो, जो वर चाहो माँगो।" उसने कमण्डल का पानी हिरण्यकश्यपु के शरीर पर छिड़का।

तुरत हिरण्यकश्यपु सोने की तरह चमचमाता, पूर्ण यौवन लिए, बाम्बी से निकला। उसने हँसवाहन में बैठे ब्रह्मा को आकाश में देखकर, उसको साष्टान्ग किया, उसकी स्तुति करके उसने कहा—"यदि आप मुझे वर देना चाहते हैं, तो मुझे वर दीजिये आपके द्वारा निर्मित पंच भूतों में से किसी से मेरी मृत्यु न हो। अन्दर बाहर, रात या दिन, भूमि या आकाश में आपकी निर्मित किसी चीज़ से,

आयुधों से, या मानवों से, निष्प्राणों से, या सप्राणों से, या सुर अथवा असुरों से मेरी मौत न हो। युद्ध में मेरी पराजय न हो। राज्य में मेरा कोई कहीं विरोध न हो। जो ऐश्वर्य, देवताओं को प्राप्त हैं, वे मुझे भी मिलें।" ब्रह्मा ने हिरण्यकश्यपु के माँगे हुए वर दे दिये और अपने लोक को वापिस चला गया।

ब्रह्मा से उसने ये वर प्राप्त करके, सुवर्ण समान, प्रकाशमान शरीर को लेकर, अपने भाई की मृत्यु के कारण विष्णु की निन्दा करते, उसने त्रिलोक के दिग्विजय का निश्चय किया। देव, राक्षस, मनुष्य, गन्धर्व, गरुड़, सिद्ध, चारण, विद्याधर, यक्ष, राक्षस, भूत, प्रेत, राजा, ऋषि, मुनि, आदि उसके वश में आ गये। विश्वकर्मा द्वारा बनाया हुआ स्वर्ग, उसका वासस्थल बना। लोक पालकों ने आकर उसके चरण छुये। सिद्ध, गन्धर्व, विद्याधर और अप्सरा आदियों ने उसके मनोरंजनार्थ नृत्य किया।

सिवावन तुम्बर नारदों ने उसकी कीर्ति का गायन किया। भूमि, आकाश, नदी, सप्त समुद्रों ने उसकी आज्ञा के अनुसार व्यवहार किया। सिवाय त्रिमूर्तियों के सभी उसकी आज्ञा का पालन कर रहे थे।

दिक्पालक आदि दिग्भ्रम में विष्णु की शरण में गये। उनकी पुकार सुनकर, विष्णु ने आकाशवाणी की "डरो मत। जरा धीरज रखो, उस राक्षस को मैं जानता हूँ। मैं उसके अभिमान को चूर कर दूँगा। जब वह अपने लड़के प्रह्लाद को सतायेगा। तब मैं ब्रह्मा के दिये हुए वरों का उल्लंघन किये बगैर ही, मैं उसको मार दूँगा।"

विष्णु की यह बात सुनकर, सन्तुष्ट होकर, देवता अपने अपने निवास स्थल चले गये। (अभी है)

भयंकर घाटी

[२५]

[केशव और उसके दोस्तों ने भयंकर घाटी में उतरकर मृगराज को मार दिया। उसी समय मह्नदण्डी मान्त्रिक वहाँ आया। जगभोजी को साथ लेकर वह घाटी के बीच में गया। उस किंकर के गले में, जो कल्पकवल्ली की गुफ़ा का पहरा दे रहा था, केशव ने फन्दा डाल दिया। जयमल्ल गुफ़ा के पास आया। बाद में :—]

जयमल्ल ने गुफ़ा के सामने जाकर कहा—

"राजकुमारी, नमस्कार। यहाँ हम जो तीन हैं, आप ही के देश के हैं। जिसका नाम केशव है, वह हमारा सरदार है। मेरा नाम जयमल्ल है। गोमान्ग हमारा दोस्त है। दुष्टों की सलाह सुनकर यद्यपि आपके पिता ने हमें देशद्रोही घोषित किया है तो भी हम हमेशा की तरह देशभक्त हैं। हम दुष्ट मह्नदण्डी और जगभोजी मान्त्रिकों का नाश करने जा रहे हैं। आपकी क्या आज्ञा है, हमें बताइये।"

जयमल्ल के यह कहते ही, गुफ़ा में किसी का धीमे से हँसना सुनाई दिया। इतने में अरुणोदय की तरह चमकती, सोलह सत्रह की लड़की, गुफ़ा से बाहर निकली। उसके सौन्दर्य को देखकर,

केशव की आँखें चौंधियाँ गईं। वह कठपुतले की तरह खड़ा खड़ा राजकुमारी की ओर देखने लगा।

कल्पकवल्ली ने गुफ़ा में से आते ही, केशव की ओर देखा, और उस किंकर को भी, जो उनके हाथ में बन्दी था। उस दान्त के मुकुट को उसने दूर फेंक दिया, जो जगभोजी ने जबर्दस्ती उसके सिर पर पहिनाया था। "तुम्हारी सहायता से मैं इन दुष्टों की चुंगल से बाहर निकल सकी। मैं तुम्हारी राजभक्ति से अपरिचित नहीं हूँ। ब्रह्मदण्डी की बात सुनकर, मेरे पिता ने तुम्हारे साथ अन्याय किया है, यह मैं ही नहीं, बल्कि देश के और भी बहुत से लोग जानते हैं। चूँकि आप लोगों ने मेरी रक्षा की है, इसलिए मुझे आपको आज्ञा देने का अधिकार नहीं है। मुझे एक शस्त्र दो, घाटी में भागे हुए उन दुष्टों का शिकार करने के लिए मैं भी आऊँगी।"

केशव ने कुछ न कहा, उसने अपनी तलवार कल्पकवल्ली को देते हुए कहा—"राजकुमारी, यह तलवार आप लीजिये। ये बाण मेरेलिये काफी हैं।"

जयमल्ल ने केशव के हाथ से जंगली बेलों का फन्दा लिया और किंकर की ओर दान्त पीसते हुए कहा—"किंकर, क्या तुम्हें अपने प्राण बहुत प्यारे हैं! या तुम्हें गुरु की रक्षा अधिक प्यारी है!"

"महागुरु, मुझे मत मारिये। इस संसार में मुझे मेरे प्राणों से कोई भी चीज़ अधिक प्यारी नहीं है।" किंकर ने रोती हुई आवाज में कहा।

"तो तुम उस पीपल के पेड़ की ओर रास्ता निकालो, जहाँ धनराशि है। यदि तुमने धोखा देने की कोशिश की, तो

तुम्हारे गले का फन्दा कस जायेगा।" जयमल्ल ने कहा।

"अच्छा, तो वहाँ जाने का सीधा रास्ता बताऊँ या घूम फिरकर जानेवाला?" किंकर ने पूछा—"कोई भी रास्ता हो, पर तुम्हारे गुरु और उसके साथ के पिशाचों को न मालूम हो कि हम वहाँ जा रहे हैं।" जयमल्ल ने कहा।

"धन्य है, वही करूँगा। पर काम खतम होने पर, गला घोंटकर मुझे न मारिये।" किंकरने कहा।

वह फिर उनको घाटी के बीच में ले गया। वह वहाँ एक पेड़ के नीचे रुका। फिर ऊँचाई पर खड़े पीपल के पेड़ की ओर इशारा करते हुए कहा—"वह है भयंकर घाटी का पेड़, जहाँ अनन्त धनराशि है। उसकी जड़ में साँप की बाम्बी है। मैं और मेरे पुराने गुरु इसको बहुत दिनों से जानते हैं, हम उस व्यक्ति की प्रतीक्षा में थे, जिसको वहाँ जाने का जन्म-जात अधिकार है।"

गोमान्ग की दी गई तलवार लेकर केशव पीपल के पेड़ की ओर गया। जयमल्ल और बाकी लोग उसके पीछे कुछ दूरी पर, पेड़ों के पीछे पीछे चले। किंकर के गले की रस्सी पकड़कर जंगली गोमान्ग उसके साथ चल रहा था।
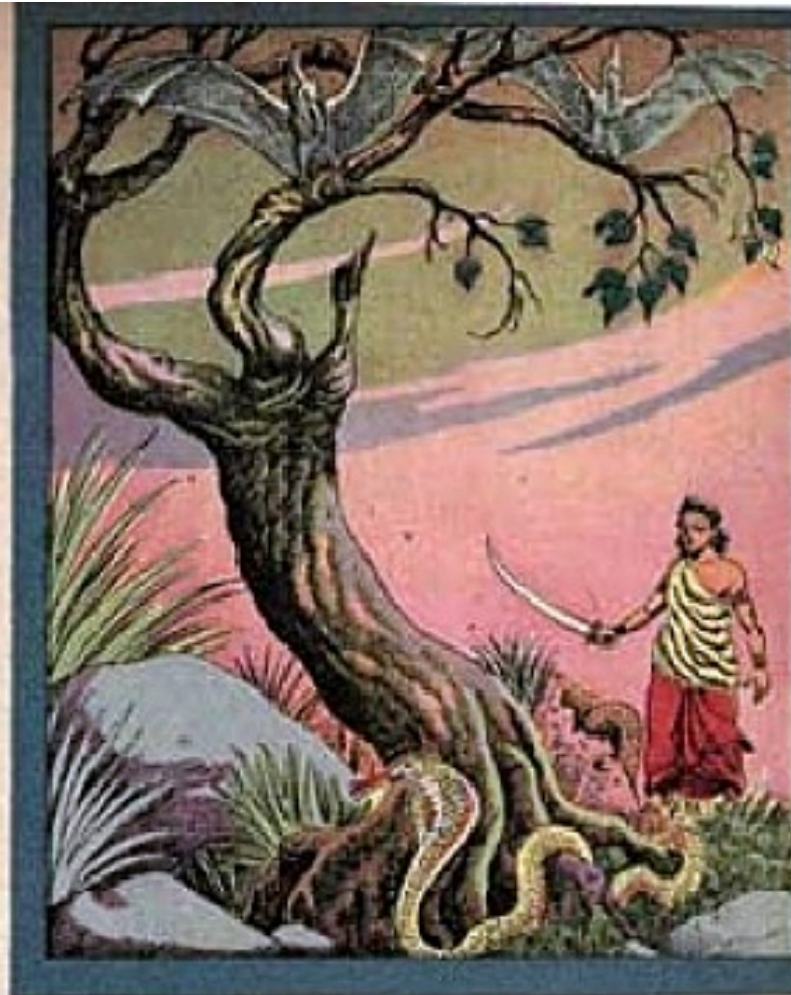
केशव पीपल के पेड़ के पास गया। उस पेड़ की जड़ में बाम्बी थी। पेड़ पर गण्डभैरण्डों ने केशव को आता देख पंख फड़फड़ाकर शोर किया। केशव बाम्बी के पास गया और तलवार से उसपर दो बार ज़ोर से मारा। तुरत एक महासर्प फण फैलाकर फुंकारता बाहर आया। यह सोचकर कि कहीं वह सर्प उसपर हमला न करे, केशव ने तलवार लेकर उसकी ओर

एक कदम रखा। सर्प ने फुंकारना छोड़ दिया। फण नीचे करके बाम्बी से उतरा और दूर जाने लगा। पीपल के पेड़ पर बैठे गण्डभैरण्ड बुरी तरह चिल्लाते उसकी ओर गये।

महासर्प का फुंकारना और उसका पीछा करते गण्डभैरण्डों का चिल्लाना, कुछ समय तक केशव ने देखा, फिर वह तलवार से बाम्बी खोदने लगा। दो तीन मिनट चुपचाप गुज़र गये। फिर यकायक पास के पेड़ के पीछे आहट हुई। ऐसी ध्वनि हुई मानों कोई कोड़ा मार रहा हो। केशव ने उस ओर देखा।

व्रजदण्डी मान्त्रिक जगभोजी और उनके पीछे गरुड़ के मुखवाला सरदार, स्थूलकाय, जित और शक्तिवर्मा पेड़ों के पीछे से ज़ोर से अट्टहास करते बाहर आये। केशव के दीखते ही व्रजदण्डी ने ज़ोर से हँसते हुए कहा—"केशव, तुमको करोड़पति बनाने के लिए मैंने कितनी कोशिशें कीं। कुछ भी हो, इस पेड़ के नीचे की निधि पर जिसका अधिकार है, वह तुम हो और तुम आ ही गये हो। कालभैरव ने जो कुछ कहा था वह सच निकला। धन की रक्षा करनेवाला महा सर्प तुम्हें देखकर

सब कुछ सौंपकर एक तरफ़ चला गया। अब तुम हटो...." कहता यह केशव की ओर आने लगा। जित और शक्तिवर्मा ने तलवारें निकालीं। स्थूलकाय ने कोड़ा निकाला। गरुड़ के मुखवाला सरदार पेड़ पर बैठे गण्डभैरुण्डों की ओर लालच की दृष्टि से देखने लगा।

केशव तलवार लेकर खड़ा हो गया। ब्रह्मदण्डी और उसके साथियों को देखते हुए उसने गुस्से में कहा—"तुम सब जहाँ हो वहीं खड़े हो जाओ। एक कदम आगे रखा तो जान नहीं बचेगी।"

यह सुन जगभोजी और ब्रह्मदण्डी खिलखिलाकर हँसे। "शायद यह हमारे गरुड़ वंशवालों की धाक नहीं जानता है।" गरुड़ के मुखवाले ने कहा।

"यदि मेरा पहिले का गुलाम इतनी दिलेरी से बात कर रहा है, तो इसका ज़रूर कोई न कोई कारण होगा। यहाँ जो खून खराबी होगी, उसमें मैं हिस्सा नहीं बाँटना चाहता।" कहते हुए स्थूलकाय ने कोड़े को कन्धे पर लगा लिया। जित और शक्तिवर्मा ने सामने आते हुए कहा—"इसका सिर और इसके पैर को काट दें।"

धोखा, कैसे मेरी होनीवाली पत्नी गुफ़ा से बाहर निकल सकी! वह द्रोही किंकर कहाँ है!"

"गुरु, किंकर यहीं है। जब इन्होंने गले में फन्दा डाला तो सब रहस्य मैंने इनको बता दिये और मुझे यहाँ लाये हैं। प्राणों का प्यार कुछ ऐसा ही होता है।" कहता किंकर जंगली गोमान्न के पीछे से चिल्लाया। इतने में कल्पकवल्ली तलवार लेकर शेरनी की तरह कूदी और एक ही चोट में उसने जगभोजी का सिर धड़ से अलग कर दिया।

जगभोजी को मरा देख, ब्रह्मदण्डी ने ज़ोर से कराहकर कहा—"वत्स, केशव, शिष्य जयमल मुझे न मारना। यदि मैंने कोई पाप किये हैं, तो वे तुम्हारे भले के लिए ही किये हैं। यह जितनी धनराशि है, तुम ही उसके उत्तराधिकारी हो।"

इस बीच केशव ने अपने पिता की ओर भागकर कहा—"बाबा, मैंने न सोचा था कि इस जीवन में तुम्हें फिर देख सकूँगा।" उसने अपने पिता का आलिंगन किया। बूढ़े का गला भर आया। बात न निकली। आंखों से आँसू बहने

केशव ने जित और शक्तिवर्मा की ओर एक कदम बढ़ाया ही था कि इतने में "गुरु मौनानन्द की जय" की आवाज़ सुनाई दी। तुरत बूढ़ा, बीड़ाली, श्वानकर्णी आदि पेड़ों के पीछे से बाहर आये। उनको देखते ही, "आह, कालभैरव" चिल्लाता ब्रह्मदण्डी एक ओर भाग गया। उस तरफ़ से जयमल अपने साथियों के साथ आया और उसने ब्रह्मदण्डी के लोगों को घेर लिया।

हाथ में तलवार लेकर कल्पकवल्ली को आता देख, जगभोजी चिल्लाया—"अरे

लगे। पिता पुत्र का प्रेम देखकर कल्पकवल्ली बड़ी आनन्दित हुई।

धीड़ाली, श्वानकर्णी ने केशव के पास आकर कहा—"केशव! तुमने और तुम्हारे मित्रों ने पंखवाले मनुष्यों को मारने में जो मदद की थी, उसके बदले में हमने तुम्हारे पिता और उसके साथियों की भरसक मदद की।" केशव ने उन जंगली मनुष्यों के सरदारों को गले लगा लिया।

ब्रह्मदण्डी मान्त्रिक, गरुड़ के मुखवाले सरदार और गुलामों के मालिक स्थूलकाय को बाँध दिया गया। चूँकि किंकर ने उनकी सहायता की थी, इसलिए जंगली गोमान्ग ने उसके गले का फन्दा ढ़ीला कर दिया। वहाँ जमा हुए लोगों से कल्पकवल्ली का परिचय कराया गया। इसके कुछ देर बाद धीड़ाली और श्वानकर्णी के आदमियों की खबर सुनकर ब्रह्मपुर का राजा और राजगुरु वहाँ आये।

केशव ने राजा और राजगुरु को पीपल के पेड़ के नीचे की बाम्बी को दिखाते हुए कहा—"इसको खोदने पर आपको अनन्त धनराशि मिल सकती है। मैं उसमें कोई हिस्सा भी नहीं माँग रहा हूँ।"

राजा ने एक बार अपनी लड़की की ओर और केशव की ओर देखा। उन दोनों को प्रेम से मुस्कराता देख, उसने मुस्कराते हुए कहा—"केशव! ऐसा लगता है, जैसे तुम मुझपर नाराज़ हो। मैं जानता हूँ कि तुम्हें, तुम्हारे पिता और दोस्तों को देश निकाला देकर मैंने गल्ती की है। जब मुझे अपनी इकलौती लड़की का अपहरण मालूम हुआ, तब मैंने क्या घोषणा करवाई थी, शायद तुम नहीं जानते हो। घोषणा यह थी कि जो कोई उसे वापिस लाकर देगा, उसका उसके

साथ विवाह करूँगा और साथ आधा राज्य भी दूँगा।"

राजगुरु ने एक हाथ से केशव का कन्धा और दूसरे से जयमल का कन्धा पकड़कर कहा—"तुम्हें जो मुसीबतें झेलनी पड़ीं, उनके लिए महाराजा से अधिक मैं जिम्मेवार हूँ। ब्रह्मदण्डी के साथ दो सैनिकों को भेजकर मैंने लोगों में व्यर्थ यह धारणा पैदा की कि तुम राजद्रोही हो और वह राजभक्त है। कुछ भी हो, तुमने अपने शक्ति सामर्थ्य से कष्टों का सामना किया ही और भयंकर घाटी की धनराशि को भी तुमने ब्रह्मपुर के राजा को सौंप दिया। इस धन से राज्य के सब लोग सुखी होंगे।"

फिर जब सैनिकों ने बाम्बी के नीचे चार पाँच फ़ीट खोदा उन्हें एक बड़ा भूगृह दिखाई दिया। उसमें रखे रत्न, मणि, माणिक्य, सोना, चान्दी देखकर सब स्तब्ध से रह गये। उस धन को सेना के साथ आये हुए हाथी और गाड़ियों पर चढ़ाया गया।

फिर सब ब्रह्मपुर पहुँचे। राजकुमारी कल्पकवल्ली से केशव का धूमधाम से विवाह हुआ।

बूढ़ा बिना किसी चिन्ता के अपने लड़के केशव के यहाँ अपना बाकी जीवन आराम से काटने लगा। कुछ दिन बाद राजा बुढ़ापे के कारण मर गया और केशव ब्रह्मपुर का राजा बना। जयमल को उसने अपना मन्त्री, जंगली गोमान्ना और छोटे गडेबंग को सेनापति नियुक्त किया और उसने सुखपूर्वक कई वर्ष राज्य किया।

(समाप्त)

चोरों का रक्षक मुनि

विक्रमार्क ने हठ न छोड़ा। पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव उतारकर, कन्धे पर डाल हमेशा की तरह चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"राजा, सब व्रतों में कठिन मौन व्रत है। उसमें बहुत से विघ्न होते हैं। मौन करने मात्र से कठिनाइयाँ नहीं चली जातीं। शमिक ऋषि मौन था, इसलिए ही तो परीक्षित का उसके गले में मरे साँप का डालना और शमिक के लड़के शृंगि का परीक्षित को साँप काटकर मर जाने के शाप आदि देना हुआ। एक और मुनि की कहानी सुनाता हूँ जिसे सब कुछ छोड़ छाड़कर मौन के कारण बहुत-सी कठिनाइयाँ झेलनी पड़ी थीं?" उसने यों कहानी सुनानी शुरू की:—

बेताल कथाएँ

एक मुनि, एक वन में तपस्या करने के लिए आया। उसने सब कुछ छोड़ छोड़ दिया। संसार से सब सम्बन्ध भी छोड़ दिये। निर्जन प्रान्त में मौन व्रत रखकर, जलाहार और फलाहार करता अपना अधिक समय तपस्या में गुजारता। जहाँ वह तपस्या कर रहा था, यदि वह कोई कभी आता, तो वह उस जगह को छोड़कर और निर्जन स्थल में चला जाता।

इस तरह जगह बदलता बदलता, मराल देश के पहाड़ों में एक जंगल में तपस्या करने गया। वह बड़ा दुर्गम प्रदेश था। आस पास कहीं भी कोई जन संचार न था। पहाड़ों में एक नाला बहता था। पहाड़ों के चारों ओर घना जंगल था। उस मुनि ने सोचा कि वह प्रदेश उसके लिए सब तरह ठीक था। वहाँ उसकी तपस्या बिल्कुल भंग न होगी। इसलिए वह वहाँ चला आया।

परन्तु वह वस्तुत: उतना निर्जन बन न था। मराल देश के बड़े चोरों का एक गिरोह कभी कभी वहाँ आता और अपने चोरी के माल को वहाँ पहाड़ों में एक गुफ़ा में रखा करता।

सैनिक यदि कभी किसी चोर का पीछा करते, तो वे इस प्रान्त में आकर घने जंगल में छुप जाया करते।

मुनि के उस प्रान्त में आने के कुछ दिन बाद एक दिन सवेरे चोरों का सरदार अपने साथियों के साथ वहाँ आया। उन्होंने पहिली बार समाधिस्थ मुनि को देखा।

"यहाँ, यह कौन आ मरा है!" चोरों के सरदार ने अपने साथियों से पूछा।

"यह कोई गुप्तचर तो नहीं है, जो मुनि का वेष बदलकर हमारे रहस्य जानने आया है!" एक चोर ने पूछा।

"यदि सचमुच मुनि भी हो, तो इसका यहाँ होना हमारे लिए खतरनाक है। इसको हमारे सब गुप्त स्थल मालूम हो जायेंगे। सैनिक हमारा पीछा करते जब आयेंगे और इसको सतायेंगे, तो यह हमारी बात बतादेगा।" एक और चोर ने कहा।

"इसलिए इसको कैलाश भेज देने में ही हमारा भला है।" एक और चोर ने कहा। बाकी चोरों ने कहा कि यह ही ठीक था।

परन्तु चोरों के सरदार ने कोई जल्दबाजी न की। उसने मुनि के पास आकर कहा—"स्वामी, यदि आप तपस्या ही करना चाहते हैं, तो आप और कहीं जाकर तपस्या कीजिये। इस जगह हम रहते हैं। हम इन पहाड़ों और जंगलों के राजा हैं। हमारा आपसे मेल नहीं बैठता। इसलिए आप तुरत यहाँ से चले जाइये। यह मेरा निवेदन है।"

मुनि तभी समाधि से उठा था, उसने आँखें खोलकर देखा, तो सही, पर उसको कोई जवाब नहीं दिया। यह सोचकर कि कहीं मुनि को बहरापन तो न था उसने वही बात और चिल्लाकर कही। फिर भी मुनि ने कोई जवाब नहीं दिया।

"देख क्या रहे हो! क्यों नहीं तलवार से उसका गला काट देते!" बाकी चोर चिल्लाये।

चोरों के सरदार ने तलवार के मुनि का सिर काटने के लिए उठाया। मुनि ने अपना हाथ उठाकर, उसके हाथ को पकड़ लिया। तुरत सरदार चिल्लाया और उसने अपना हाथ छोड़ दिया। उसे मुनि का हाथ लाल, तपा लोहा-सा लगा।

मुनि ने मौन छोड़कर कहा—"बेटा! तुम्हें घोर नरक से बचाने के लिए मैंने

तुम्हें अपने प्रयत्न में सफल न होने दिया। मुझे मरने में कोई आपत्ति नहीं है। पर मुझे मारने से जो तुम्हें पाप होगा, उससे तुम जन्म-जन्मान्तर में भी मुक्त न हो सकोगे। मुझे तुम पर गुस्सा नहीं है। तुम अपने रास्ते चले जाओ।"

चोरों के सरदार ने मुनि के समक्ष साष्टाङ्ग करके कहा—"हमें यह डर है कि आपके कारण हमारे रहस्य न खुल जायें। आप हमें वचन दीजिये कि आप उन्हें किसी को न बतायेंगे, जब तक हमको आपसे कोई खतरा नहीं है, तब तक निश्चिन्त हो, यहाँ तपस्या कीजिये।"

"मैं भला, किसी की क्यों हानि करूँगा? हर किसी का अपना पाप ही उसे बिगाड़ेगा। यदि तुम ठीक तरह रहे तो तुमको किसी से हानि न होगी।"

इसके बाद चोर मुनि के पास न गये। कुछ दिन बीत गये। चोर, चोरी करते जाते थे। एक दिन चोरों के सरदार का पीछा करते, कुछ सिपाही और कोतवाल आये। चोरों का सरदार अपनी गुप्त जगह आकर छुप गया।

सिपाही और कोतवाल कुछ देर बाद मुनि के पास आकर, इधर उधर देखने लगे। वे न जान सके कि वह आदमी जिसका पीछा करते वे आये थे, किधर चला गया था। उन्हें किसी भी तरफ़ कोई रास्ता न दिखाई दिया।

कोतवाल ने मुनि के पास आकर पूछा—"स्वामी इस तरफ़ एक आदमी भागा भागा आया था। आपने क्या देखा है!"

मुनि तभी समाधि से उठा था। उसने आँखें खोलकर देखा। पर उसने कोतवाल का कोई उत्तर नहीं दिया। कोतवाल ने वही प्रश्न दो तीन बार किया। परन्तु मुनि ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"तुम ही एक बड़े चोर मालूम होते हो। हम जिसका पीछे करते आये हैं, वह एक बड़ा चोर है। यदि तुमने हमारी उसको पकड़ने में मदद न की, तो तुम्हें भी दण्ड मिलेगा। यदि तुमने उसके बारे में सब कुछ न बताया, तो मैं तुम्हारा सिर काट दूँगा।" कहते हुए कोतवाल ने तलवार उठायी।

तब भी मुनि ने कोई उत्तर न दिया, बल्कि उसने अपना सिर धीमे से और झुका दिया।

उस समय पेड़ों के पीछे से चोरों का सरदार बाहर आया। "ये तपस्या करनेवाले पुण्यात्मा हैं। उनका कुछ न बिगाड़िये। मैं ही चोर हूँ। मुझे पकड़ लीजिये। उन्हें छोड़ दीजिये।" उसने कोतवाल से कहा।

कोतवाल उसके हाथ में हथकड़ी डालकर उसको ले गया।

बेताल ने यह कथा सुनाकर कहा—"राजा, मुझे एक सन्देह है। उस मुनि ने, जिसने कि चोर के तलवार उठाने पर उसका हाथ पकड़ लिया था क्यों कोतवाल के सामने सिर झुका दिया था? क्यों नहीं मुनि ने सोचा कि जो पाप उसको मारने पर उसको लगेगा; कोतवाल को भी लगेगा? सब कुछ छोड़ छाड़कर तपस्या करनेवाले मुनि को चोरों के सरदार पर क्यों अधिक अभिमान था? इन प्रश्नों का तुमने जान बूझकर उत्तर न दिया, तो तुम्हारा सिर टुकड़े टुकड़े हो जायेगा।"

तब विक्रमार्क ने कहा मुनि को कोई पक्षपात न था। यदि चोरों का सरदार उसे मारता, तो उसको इसका पाप लगता। यदि कोतवाल उसे मारता, तो उसे कोई पाप नहीं लगता। उसकी नजर में जहाँ तक कानून का सम्बन्ध है मुनि दन्डनीय ही था। चूँकि मुनि ने चोर की रहने की जगह के बारे में जानते हुए भी जानकारी न दी थी इसलिए मुनि कोतवाल के हाथ मरने को तैयार हो गया था।

राजा का इस प्रकार मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और फिर पेड़ पर जा बैठा।

बड़ा तैराक

बहुत साल पहले, पश्चिम समुद्र के किनारे केरल के अन्तर्गत, लक्षद्वीप के पास एक द्वीप था। चूँकि उसका बहुत-सा भाग पथरीला था, इसलिए वह खेती व अन्य चीज़ों के लिए उपयोगी न था। इसलिए उस द्वीप के लोग, या तो मछलियाँ पकड़ा करते नहीं तो पशु पाला करते। वहाँ के मछियारे कुछ नाविक भी हो गये थे। उन में से कई, समुद्र की तह में डुबकियाँ मारा करते, वहाँ से मोती-सीप वगैरह निकालकर लाते और व्यापारियों को उन्हें बेचकर, अपना पेट भरा करते।

उस द्वीप के एक बूढ़े मछियारे के बहुत-से लड़के थे। उनमें से कई, अपने पिता की मछलियाँ पकड़ने में मदद करते। आखिर वे भी यही पेशा करने लगे। एक दो ने व्यापारी नौकाओं में काम भी पा लिया था! उनमें से सब से छोटा, बचपन से कुछ विचित्र प्रकृति का था। उसे मछलियों का छटपटाकर मर जाना न भाता था। बचपन में जब समुद्र तट पर जाया करता, पिता और भाइयों के पकड़ी हुई मछलियों को टोकरियों में लादकर लाता, तब अगर किसी मछली को ज़िन्दा पाता, तो वह उसे पानी में फेंक देता। कई बार घर पहुँचते पहुँचते टोकरी में आधी मछलियाँ ही रह जाती थीं।

चूँकि उसे प्राणिमात्र पर दया थी, इसलिए वह मछली पकड़ने का पेशा न कर सका। परन्तु उसे समुद्र और मछलियों पर अत्यन्त प्रेम था। जब उसे माँ-बाप डाँटा करते—"बिल्कुल बेकार भोंदू है...."

नारायण

तो वह समुद्र के तट पर घंटों अकेला बैठा रहता। समुद्र में तैरा करता। भूमि की अपेक्षा, समुद्र की तह में उसे अधिक रंग, आश्चर्य और आकर्षक चीज़ें दिखाई देतीं। इसलिए उसने समुद्र की तह में काफ़ी देर रहने का अभ्यास किया। वह समुद्र की तह में घूमा करता, वहाँ के विचित्र-विचित्र मछलियों, "पेड़" विचित्र प्रकाश को देखा करता।

जब वह बड़ा हुआ, तो उस द्वीप में कोई ऐसा न था, जो पानी की तह में, जितनी देर वह रह सकता था, उतनी देर रह सके। लोगों ने उसका नाम ही "मत्स्य मनुष्य" रख दिया। वह सवेरे ही निकल जाता और सारा दिन समुद्र में ही बिता देता, अन्धेरा होने के बाद घर आता। उस दिन जो जो आश्चर्य उसने देखे थे, उसको अपने भाइयों को सुनाता। समुद्र की तह में डूबी हुई किश्तियाँ थीं। उनमें जल बनस्पतियाँ पैदा होती थीं। पन्ने के पत्थरों पर लाल और सफ़ेद पन्ने की "शाखायें" थीं। मोती की सीपें, नक्षत्र मत्स्य, अद्भुत मछलियाँ थीं।

जब वह इसका वर्णन किया करता, तो उसके भाई उसकी न सुना करते, वे सोचते कि हो न हो, उसे ज़रूर पागलपन था। कहीं सचमुच पागल न हो जाये, यह सोचकर, उसकी माता ने उसको ताबीज बंधवाये। परन्तु उनके बंधवाने पर भी वह न बदला। यही नहीं, उसको बहुत ख्याति भी मिली। "मत्स्य मनुष्य" यही बात सब के मुख से सुनाई पड़ती। होते-होते उसकी ख्याति उस देश के राजा तक भी पहुँची।

इसलिए राजा ने एक दिन उसको अपने महल में बुलवाया।

जब वह राजा का दर्शन करने गया, तो उसकी सत्रह वर्ष की लड़की भी उसके साथ थी।

"सुनता हूँ, तुम गहरे से गहरे समुद्र में चले जाते हो। समुद्र की तह को छानने में तुम्हारी बराबरी का कोई नहीं है। क्या यह सच है?" राजा ने पूछा।

"मैं औरों की बात नहीं जानता, महाराज।" उसने कहा।

"हम तुम्हारी शक्ति देखेंगे।" राजा ने कहा और झट अपनी विहार नौका में अपनी लड़की के साथ उसे भी चढ़ाकर, उसे समुद्र के बीच में ले गया। तब उसने एक सोने का पात्र समुद्र में फेंक दिया। "जाओ, उसे लाओ।" उसने कहा।

उसने समुद्र में डुबकी लगाई। तह में जाकर, सोने के पात्र को लाते-लाते, वह पन्ने की एक "टहनी" भी तोड़ लाया। उसने पन्ने की "टहनी" राजकुमारी को और सोने के पात्र को राजा को देना चाहा।

"नहीं! नहीं, वह तुम ही रखो, इससे भी मुश्किल काम बताता हूँ। करोगे?" राजा ने पूछा।

"बताइये।"

"महाराज, आपके द्वीप के नीचे, तीन बड़े-बड़े पहाड़ हैं। उनके पत्थर मामूली पहाड़ के पत्थरों से अच्छे हैं। परन्तु उनमें से एक नष्ट होता जा रहा है।" उसने राजा से कहा।

"नष्ट हो रहा है! क्यों!" राजा ने पूछा।

"उसके निचले भाग में अग्नि प्रज्वलित हो रही है। वह पत्थर को नष्ट कर रही है। उस अग्नि के आसपास न कोई पौधा है, न कोई छोटी मछली ही है।" उसने कहा।

"पानी में आग कैसे!" राजा ने पूछा।

"महाराज, वह साधारण अग्नि नहीं है, वह वड़वाग्नि है। उसे पानी ठंडा नहीं कर सकता।" उसने कहा।

"वड़वाग्नि शब्द तो सुना है, पर उसे कभी देखा नहीं है। कुछ अग्नि लाकर दिखाओ।" राजा ने कहा।

"पर अग्नि को कैसे लाया जाये, महाराज!" उसने पूछा।

"मैं यह कैसे बताऊँ, यह तुम्हें ही मालूम होना चाहिए।" राजा ने कहा।

"तुम द्वीप के चारों ओर के समुद्र की तह में क्या-क्या है, यह जानकर, हमें बताओ।" राजा ने कहा।

"बहुत दूर...." उसने कहा।

"हाँ। चाहो, तो जितना समय ले लो, जब चाहो, तब आराम भी कर लेना। परन्तु द्वीप के चारों ओर के समुद्र के बारे में बिना जाने न आना।" राजा ने कहा।

"तो यहीं ठहरिये।" यह कहकर, राजकुमारी की ओर देखकर, समुद्र में उसने डुबकी लगाई। उसे वापिस आने के लिए तीन महीने लगे।

वह फिर समुद्र की तह में गया, अग्नि के पास जाने के लिए उसने बहुत कोशिश की। हाथ, पैर आदि जल गये। वह जले हुए शरीर के साथ विहार नौका के पास आया। "महाराज, मैं अग्नि तो साथ न ला सका, पर उसके होने की गवाही साथ ले आया हूँ।" उसने अपने हाथ, पर उसको दिखाया।

"अब मैं तुम्हारी बात का विश्वास कर सकता हूँ। सचमुच तुम बड़े तैराक हो।" राजा ने कहा।

"महाराज, इस बार मैंने बहुत समीप से अग्नि देखी है। वह एक पहाड़ के बहुत-से भाग को निगल चुकी है। द्वीप में जल्दी ही बड़ी आपत्ति आनेवाली है, ऐसा मुझे लगता है।" उसने कहा।

राजा को उसकी बात पर विश्वास हो गया, उसने उस द्वीप में रहनेवालों को, द्वीप छोड़कर जाने की आज्ञा दी। उनके लिए अन्यत्र रहने का प्रबन्ध किया गया। मनुष्य और पशु तो उस द्वीप को छोड़ गये, पर कुछ दिनों बाद, उस द्वीप में भयंकर भूकम्प आया। एक महीने में उसका एक एक भाग, समुद्र में डूब गया।

राजा ने "मत्स्य मनुष्य" को बुलाकर कहा—"तुम्हारी अक्लमन्दी के कारण, हज़ारों लोगों के प्राण बच सके। क्या ईनाम चाहते हो, बताओ।"

उसने राजकुमारी की ओर देखा तो, पर कोई जवाब न दिया। अपनी लड़की की राय तो वह पहिले ही ले चुका था। इसलिए उसने उसकी शादी कर दी और उसको अपने पास ही रख लिया।

धूर्त लड़की

वज्रदत्त नाम का राजा अपनी प्रजा का योगक्षेम जानने के लिए प्रायः वेष बदलकर घूमा करता। उसके साथ सूक्ष्मबुद्धि नाम का मन्त्री भी रहा करता था। एक दिन राजा और मन्त्री व्यापारी का वेष बदलकर, नगर से बाहर गाँवों में घूम फिर रहे थे कि उनको एक गाँव में एक झोंपड़े में से खेदभरी बातें सुनाई दीं। राजा ने उनकी बात सुनीं। "क्या किया जाये, मुझे नहीं सूझ रहा है। मुझ से कुछ नहीं होगा। तुम्हारी माँ को वह ईश्वर ही जिला सकता है।"

यह सुन राजा को दया आयी। वह मन्त्री के साथ झोंपड़ी के दरवाजे के पास आया। अन्दर झाँककर देखा। एक गरीब किसान सिर पर हाथ रख दुखी बैठा था। खम्भे के सहारे खड़ी उसकी लड़की रो रही थी और बगल में चटाई पर किसान की पत्नी कराहती पड़ी थी। अजनबी को दरवाजे के पास खड़ा देख, किसान उठ खड़ा हुआ।

"क्या तकलीफ़ है तुम्हें? हम भरसक उसे हटाने का प्रयत्न करेंगे।" वेष बदले हुए राजा ने कहा।

"मैं बड़ा गरीब हूँ। मेरी पत्नी बीमार है। इलाज के लिए कम से कम बीस रुपये चाहिए। यदि किसी ने कर्ज दिया तो महीने भर में वह कर्ज चुका दूँगा। पर कोई देनेवाला नहीं है। कितनों से ही पूछकर देखा। बेचने के लिए या गिरवी रखने के लिए भी मेरे पास कुछ नहीं है।" किसान ने कहा।

"बीस रुपये ये लो। पर महीने में कैसे उसे चुकाओगे?" राजा ने पूछा।

"मजदूरी करके जैसे भी हो, मैं देदूँगा।" किसान ने कहा।

"राजा ने मन्त्री को इशारा किया। उसने अपनी थैली में से बीस रुपये निकालकर दे दिये।" किसान ने कृतज्ञतापूर्वक और आश्चर्य के साथ उन्हें लेते हुए कहा—"न मालूम आप कौन हैं और कहाँ रहते हैं! न मालूम इसका कितना सूद चाहेंगे!"

"सूद नहीं चाहिए। परन्तु एक महीने में कर्ज दे देना। आज शुक्र चतुर्थी है। अगली शुक्र चतुर्थी के दिन शहर में विनायक के मन्दिर के पास पैसा ले आना। हम वहीं होंगे।" कहकर राजा, मन्त्री के साथ आगे चला गया।

यह सोचकर कि भगवान ने ही उसकी मदद की थी उसने अपनी पत्नी की चिकित्सा करवाई। चिकित्सा के कारण वह जल्दी ही ठीक हो गई। परन्तु एक महीने में वह बीस रुपये जमा न कर सका। कुछ कम रह गया। कम पैसा लेकर उनके पास जाना ठीक न लगा। इसलिए वह विनायक के मन्दिर में नहीं गया। उसने सोचा कि जब शेष पैसा मिल जायेगा, तभी उनके पास जाकर उनसे क्षमा माँग लेगा।

अवधि की समाप्ति के बाद शुक्र पंचमी के शाम को राजा और मन्त्री पहिले की तरह वेष बदलकर किसान के झोंपड़े के पास आये। "कौन है अन्दर!" उन्होंने पूछा।

"मैं हूँ" किसान की लड़की ने अन्दर से बाहर आकर उनको देखकर कहा—"जो नहीं दिखाई देता है। वह अन्दर ठीक ही है। सब जगह प्रकाश है। अन्धेरा कहीं नहीं है।"

राजा को ये बातें बिल्कुल समझ में नहीं आयीं। उसने मन्त्री की ओर देखा। जब उसने मन्त्री के मुँह पर मुस्कराहट देखी, तो उसे लगा कि मन्त्री को वे बातें समझ आ गई थीं।

"तुम्हारा पिता कहाँ है?" मन्त्री ने उस लड़की से पूछा।

"ऊपर चढ़कर सूर्य की आखें मूँदने गया है।" उसने कहा।

"तुम्हारी माँ कहाँ है?" मन्त्री ने पूछा।

"कुँए के खम्भे के पानी से पैसे चुनने गई हैं।" उसने कहा।

"तो तुम क्या कर रही हो?" मन्त्री ने फिर पूछा।

"सोने से चान्दी निकालकर आग में डाला है। सब उठानेवाली पर कुछ डालकर चमका रही हूँ।"

"क्या तुम्हारा पिता नहीं जानता था कि हम आयेंगे?" मन्त्री ने पूछा।

"जानता है। दस लोगों के सामने मुख में दो के कम होने के कारण मुख खोलने के लिए शर्माया। कहता था कि हाथ पसारेगा। उसने आपको दस बार पलकें मूँदकर खोलने के लिए कहा है।" लड़की ने कहा।

" क्या तुम जानते हो ! हम कौन हैं !" मन्त्री ने पूछा। "हाँ, हाँ, तीन क्षक...." कहते हुए, उस लड़की ने नमस्कार किया।

" तो जाओ अपना काम देखो।" मन्त्री ने उससे कहकर राजा से आने का इशारा किया। वह जब वापिस आ रहा था, तो राजा ने मन्त्री से पूछा—" उस लड़की ने जो कुछ कहा था मुझे समझ में नहीं आया, क्या तुम्हें समझ में आया !"

" क्यों नहीं समझ में आया ! खूब समझ में आया। वह लड़की है गरीब घराने की पर है बड़ी चुस्त।"

" उस लड़की ने जो कहा था, उसका क्या अर्थ है !" राजा ने पूछा।

" हमें देखते ही, उसने कहा कि उसकी माँ का स्वास्थ्य ठीक हो गया है। वे सुख से हैं। कोई कष्ट नहीं है, जो नहीं दिखाई देता है, उसका मतलब है प्राण। प्रकाश का अर्थ सुख है। अन्धेरा का अर्थ कष्ट है। जब पूछा कि तुम्हारे पिता कहाँ है तो उसने बताया कि झोंपड़ियों पर छप्पर डालने गया है। सूर्य की आँखें मूँदने का मतलब है, झोंपड़ी के छत के छेद बन्द करना। यह शायद उसके कामों में

से एक है। जब उसकी माँ के बारे में पूछा तो उसने बताया कि वह ताड़ी बेचने गई हुई थी। कुँये के खम्भे का पानी का मतलब ताड़ी से है। चूँकि ताड़ के पेड़ पर भी पानी होता है, इसलिए उसे कुँये के खम्भे का पानी भी कहते हैं। जब मैंने पूछा कि तुम क्या कर रहे थे, तो उसने बताया कि धान कूटकर, चावल बनाकर उसे चूल्हे पर चढ़ाकर आयी थी। सोने का मतलब धान है। चान्दी का मतलब चावल है। फिर कहा कि फर्श पर कुछ पोत रही थी, सब को उठानेवाली भूमि ही तो है। जब पूछा कि तुम्हारा पिता कल क्यों नहीं आया था, तो उसने बताया कि बीस रुपयों में, दो रुपये कम थे इसलिए वह शर्मिन्दा था। दो रुपये मिलने पर उसने आने का निश्चय किया था। हाथ दिखाने का अर्थ यही है। दस बार पलकें मूँदकर खोलने का अर्थ है दस दिन।" मन्त्री ने कहा।

राजा ने कुछ देर सोचकर कहा—"यह सब तो ठीक है। पर क्या उसे पता लगा कि हम कौन हैं! क्षक का अर्थ क्या है!"

मन्त्री ने हँसकर कहा—"यह ठीक ही तो है, हम रक्षक हैं, भक्षक हैं, शिक्षक हैं।" तीन क्षक का अर्थ यही तो है।

राजा को उस लड़की की होशियारी बहुत पसन्द आयी। अगले दिन ही उसने किसान को दरबार में बुलवाया। उससे कहा—"तुम्हें कर्ज देने की कोई जरूरत नहीं है। तुम्हें कुछ पैसा दूँगा। तुम सुख से जीओ।" कहकर उसने उसको हज़ार सोने की मुद्रायें भेंट में दीं।

"क्या तुम जानते हो? हम कौन हैं?" मन्त्री ने पूछा। "हाँ, हाँ, तीन क्षक...." कहते हुए, उस लड़की ने नमस्कार किया।

"तो जाओ अपना काम देखो।" मन्त्री ने उससे कहकर राजा से आने का इशारा किया। वह जब वापिस आ रहा था, तो राजा ने मन्त्री से पूछा—"उस लड़की ने जो कुछ कहा था मुझे समझ में नहीं आया, क्या तुम्हें समझ में आया?"

"क्यों नहीं समझ में आया? खूब समझ में आया। वह लड़की है गरीब घराने की पर है बड़ी चुस्त।"

"उस लड़की ने जो कहा था, उसका क्या अर्थ है?" राजा ने पूछा।

"हमें देखते ही, उसने कहा कि उसकी माँ का स्वास्थ्य ठीक हो गया है। वे सुख से हैं। कोई कष्ट नहीं है, जो नहीं दिखाई देता है, उसका मतलब है प्राण। प्रकाश का अर्थ सुख है। अन्धेरा का अर्थ कष्ट है। जब पूछा कि तुम्हारे पिता कहाँ है तो उसने बताया कि झोंपडियों पर छप्पर डालने गया है। सूर्य की आँखें मूँदने का मतलब है, झोंपडी के छत के छेद बन्द करना। यह शायद उसके कामों में

से एक है। जब उसकी माँ के बारे में पूछा तो उसने बताया कि वह ताड़ी बेचने गई हुई थी। कुँये के खम्भे का पानी का मतलब ताड़ी से है। चूँकि ताड़ के पेड़ पर भी पानी होता है, इसलिए उसे कुँये के खम्भे का पानी भी कहते हैं। जब मैंने पूछा कि तुम क्या कर रहे थे, तो उसने बताया कि धान कूटकर, चावल बनाकर उसे चूल्हे पर चढ़ाकर आयी थी। सोने का मतलब धान है। चान्दी का मतलब चावल है। फिर कहा कि फर्श पर कुछ पोत रही थी, सब को उठानेवाली भूमि ही तो है। जब पूछा कि तुम्हारा पिता कल क्यों नहीं आया था, तो उसने बताया कि बीस रुपयों में, दो रुपये कम थे इसलिए वह शर्मिन्दा था। दो रुपये मिलने पर उसने आने का निश्चय किया था। हाथ दिखाने का अर्थ यही है। दस बार पलकें मूँदकर खोलने का अर्थ है दस दिन।" मन्त्री ने कहा।

राजा ने कुछ देर सोचकर कहा—"यह सब तो ठीक है। पर क्या उसे पता लगा कि हम कौन हैं! क्षक का अर्थ क्या है!"

मन्त्री ने हँसकर कहा—"यह ठीक ही तो है, हम रक्षक हैं, भक्षक हैं, शिक्षक हैं।" तीन क्षक का अर्थ यही तो है।

राजा को उस लड़की की होशियारी बहुत पसन्द आयी। अगले दिन ही उसने किसान को दरबार में बुलवाया। उससे कहा—"तुम्हें कर्ज देने की कोई जरूरत नहीं है। तुम्हें कुछ पैसा दूँगा। तुम सुख से जीओ।" कहकर उसने उसको हज़ार सोने की मुद्रायें भेंट में दीं।

पुरानी चप्पल

एक गाँव में रामसुख नाम का एक किसान रहा करता था। वह अपनी थोड़ी सी ज़मीन में अपने आप शाक-सब्जी पैदा किया करता और हफ्ताह में एक बार कस्बे में जाकर बेचता और घर के लिए ज़रूरी चीज़ें लाता। जब कभी रामसुख कस्बा जाता, तो वहाँ मन्दिर में जाता और वहाँ भगवान के दर्शन करके, घर आता।

एक बार रामसुख कस्बे के लिए खाली पैर निकला। चूँकि उसकी पुरानी चप्पल बिल्कुल घिस घिसा गयी थी इसलिए इस बार उसने, कस्बे में शाक-सब्जी बेचकर, नई चप्पल खरीदी। उन्हें लेकर वह मन्दिर आया। चप्पल बाहर छोड़कर भगवान को देखने के लिए, मन्दिर के अन्दर गया।

मन्दिर के पास ही बनवारीलाल नाम का दुकानदार था। वह भी मन्दिर गया और जब वह भगवान के दर्शन करके बाहर आ रहा था तब रामसुख अन्दर आया। मन्दिर से बाहर आते ही बनवारीलाल को नई चप्पल दिखाई दी। लालची था ही, उसने उन्हें लेना चाहा। उसने उन्हें पैरों में पहिना। उसके पैरों में वह चप्पल ठीक बैठ भी गई। थोड़ी देर उन्हें पहिनकर बनवारीलाल इधर उधर फिरा भी, किसी ने उसको नहीं रोका। यह सोचकर कि उस चप्पल का मालिक कहीं आस पास न था और बनवारीलाल को चप्पल के लिए घर जाने की भी ज़रूरत न थी, इसलिए नई चप्पल पहिनकर दुकान गया।

बनवारीलाल के जाने के कुछ देर बाद रामसुख मन्दिर से बाहर आया, तो उसने देखा कि उसकी चप्पल वहाँ न थी। चूँकि वहाँ कोई दूसरी जोड़ी चप्पल न थी, इसलिए यह भी अनुमान नहीं किया जा सकता था कि कोई उन्हें गल्ती से पहिनकर चला गया था। यानि कोई मेरी चप्पल चुराकर ले गया है। भगवान के मन्दिर में ही चोरी हो गई।

बड़ी कठिनाई से, पसीने की कमाई से, खरीदी चप्पल जब चली गई तो रामसुख के मन को बड़ी ठेस लगी। बिना चप्पलों का पता लगाये उसने घर न आना चाहा। वह जल्दी जल्दी बाजार में पहुँचा। थोड़ी देर बाद ही उसको बनवारीलाल आगे चलता दिखाई दिया। उसके पैरों में नई चप्पल थी। वह आदमी भी उसे वही लगा जिसे उसने मन्दिर में देखा था। इसलिए रामसुख उसके पीछे पीछे उसकी दुकान में गया।

बनवारीलाल दुकान के बाहर चप्पल छोड़कर अन्दर गया। तब रामसुख ने उन चप्पलों को ध्यान से देखा। वह जान गया कि वह उसी की चप्पल थी। चूँकि खरीदने से पहिले ही उसने बहुत देर तक उनको देखा था।

इस बीच बनवारीलाल ने रामसुख को देखकर पूछा—"क्या चाहिए? अच्छी इमली आयी है। लोगे?" वह नहीं जानता था कि जो चप्पल वह उठा लाया था, वह उसकी ही थी।

"मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं अपनी चप्पल के लिए आया हूँ।" रामसुख ने कहा।

बनवारीलाल का दिल बैठ गया, पर तुरत उसने, उस "गँवार" पर धौंस जमाने की

ठानी। चूँकि चप्पल की बात नहीं थी यदि उसने उसे चप्पल का चोर बता दिया, तो उससे उसका बड़ा अपमान होता। इसलिए बनवारीलाल ने आँखें बड़ी करते हुए पूछा—"क्या कहा!"

रामसुख बिल्कुल डरा नहीं। उसने धीमे से कहा—"मन्दिर से आते आते आपने उन्हें गल्ती से पहिन लिया होगा, मैं अपनी चप्पल ले जा रहा हूँ।" उसने चप्पलों में पैर रखे।

"मैं तुम्हारी चप्पल ले आया हूँ! यानि तुम्हारा कहना है कि मैंने चोरी की है! चाल चली है!" बनवारीलाल ने ऊँची आवाज़ में कहा।

"मैंने तुम पर चोरी का इल्ज़ाम कहाँ लगाया है! मैंने तो सिर्फ यह ही कहा है कि चप्पल मेरी है।" रामसुख ने कहा।

बनवारीलाल यह न जान सका कि रामसुख यह सिद्ध कर सकता था कि चप्पल उसी की थी। और यदि वह यह मान जाता कि चप्पल उसी की थी, तो पाँच दस आदमियों के सामने कहा जाता कि उसने चोरी की थी। कई गली में खड़े होकर उनकी बातें सुन भी रहे थे।

"अरे, जा चोर कहीं के...." बनवारीलाल ने रामसुख को दुकान से धकेलने की कोशिश की।

रामसुख चिल्लाया—"मेरी चप्पल, मेरी नई चप्पल।" कुछ और लोग जमा हो गये। सबने रामसुख से पूछा कि उसने वे चप्पल कहाँ खरीदी थीं। रामसुख ने कहा, गली में फिरनेवाले एक मोची से उसने वे चप्पल खरीदी थीं।

"देखो भाई, तुम यह नहीं साबित कर सकते कि चप्पल तुम्हारी है और एक बड़ा आदमी उनको अपनी बता रहा है।
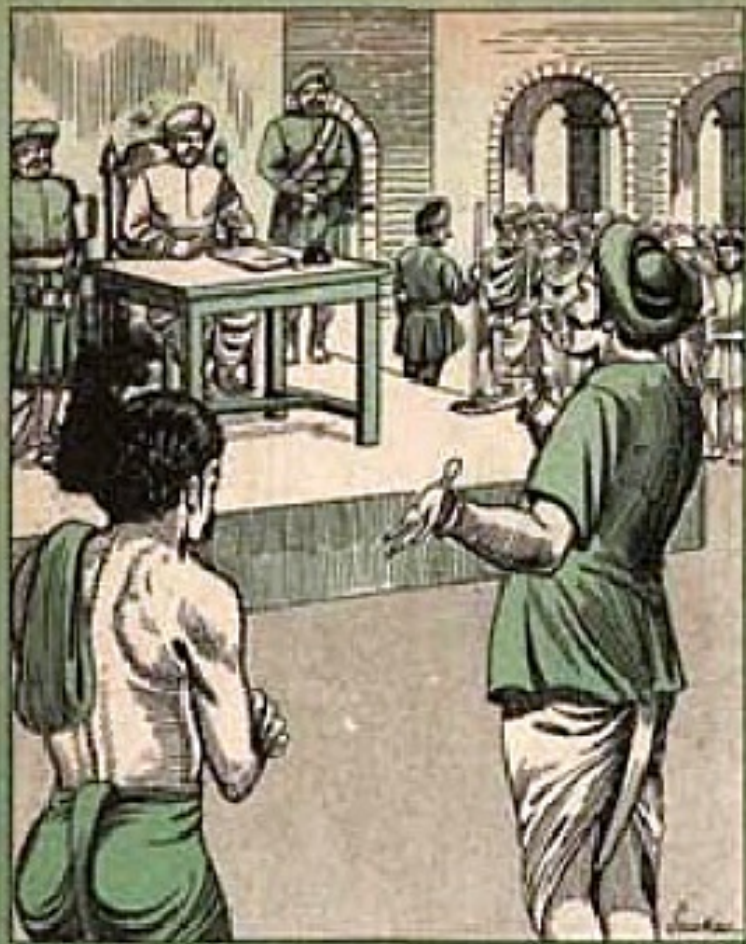
इसलिए इस मामले में कोई बीच बचाव नहीं किया जा सकता। न्यायाधिकारी के पास जाकर फरियाद करो, फिर जो होगा, सो होगा।" पाँच-दस लोगों ने रामसुख को सलाह दी।

रामसुख उस सलाह के अनुसार न्यायाधिकारी के पास गया। उसने फरियाद की कि फलाना दुकानदार उसकी चप्पल चुरा ले गया था। न्यायाधिकारी ने बनवारीलाल को चप्पल के साथ बुलाया। चप्पल दोनों के पैरों पर ठीक बैठती थी। दोनों के गवाह न थे। "यदि इन चप्पलों को खरीदने के लिए भी गवाहों की ज़रूरत हुई, तो क्या मुझ-सा व्यापारी जी सकेगा!" बनवारीलाल ने कहा।

न्यायाधिकारी जान गया कि दोनों में से कोई एक चोर था। "यदि तुम दोनों अपनी पुरानी चप्पल लाये, तो मैं बताऊँगा कि वह चप्पल किसकी है।" न्यायाधिकारी ने कहा।

"क्या मैं पुरानी चप्पल रखूँगा! उन्हें मैंने कभी के इस जैसे गरीब को दे दिये हैं।" बनवारीलाल ने रामसुख को दिखाया।

रामसुख ने कहा—"मैं पुरानी चप्पलों को आपको लाकर दिखाऊँगा। आपको न्याय करना होगा। गरीब हूँ।"

"हाँ, हाँ, करो, तुम्हारी पुरानी चप्पल काफ़ी है, सच जानने के लिए।" न्यायाधिकारी ने कहा। न्यायाधिकारी को तभी सन्देह हो गया कि बनवारीलाल ने चोरी की थी।

बनवारीलाल की चप्पल कोई उतनी पुरानी न थी। उनको अभी बहुत दिन पहिना जा सकता था। यदि न्यायाधिकारी उन्हें देखेगा, तो पूछेगा—"ये तो अभी अच्छी हैं—क्यों तुमने इस बीच नई चप्पल खरीदी!"

बनवारीलाल ने झूट कहा था। उसने अपनी दानशीलता और रामसुख के दारिद्र्य को दिखाने के लिए ही यह कहा था।

रामसुख और बनवारीलाल के जाते ही न्यायाधिकारी ने कोतवाल को बुलाकर कहा—"फलाने बनवारीलाल के पास किसी आदमी को छुपे-छुपे रखिये। वह आज रात फलाने गाँव जाकर चोरी कर सकता है।"

जैसे कि न्यायाधिकारी का अनुमान था, वैसे ही बनवारीलाल ने रामसुख की चप्पल चुराने का निश्चय किया—तिल-ताड़ हो रहा था। जब रामसुख ने कहा था कि चप्पल उसी की थी अगर वह उन्हें दे देता, तो बात इतनी दूर पहुँचती ही न। पाँच-दस लोग उसे चोर कहेंगे, इस डर से ही वह रामसुख पर रौब गाँठ रहा था। यदि न्यायालय में यह फैसला हुआ कि वह चोर था, तो उस कस्बे में उसे कोई पानी तक न देगा। इसलिए चाहे कुछ भी हो, बनवारीलाल ने रामसुख की पुरानी चप्पल लेने की ठानी।

रामसुख के पीछे-पीछे ही बनवारीलाल भी निकल पड़ा और अन्धेरा होने के बाद गाँव पहुँचा और बाहर खड़ा-खड़ा अन्दर रामसुख की बात सुनने लगा। उसने अपनी पत्नी को जो कुछ गुज़रा था, बताकर पूछा—"मेरी पुरानी चप्पल कहाँ है! कल उन्हें न्यायाधिकारी को जब तक न दिखा दूँगा, तब तक मुझे नई चप्पल नहीं मिलेगी।"
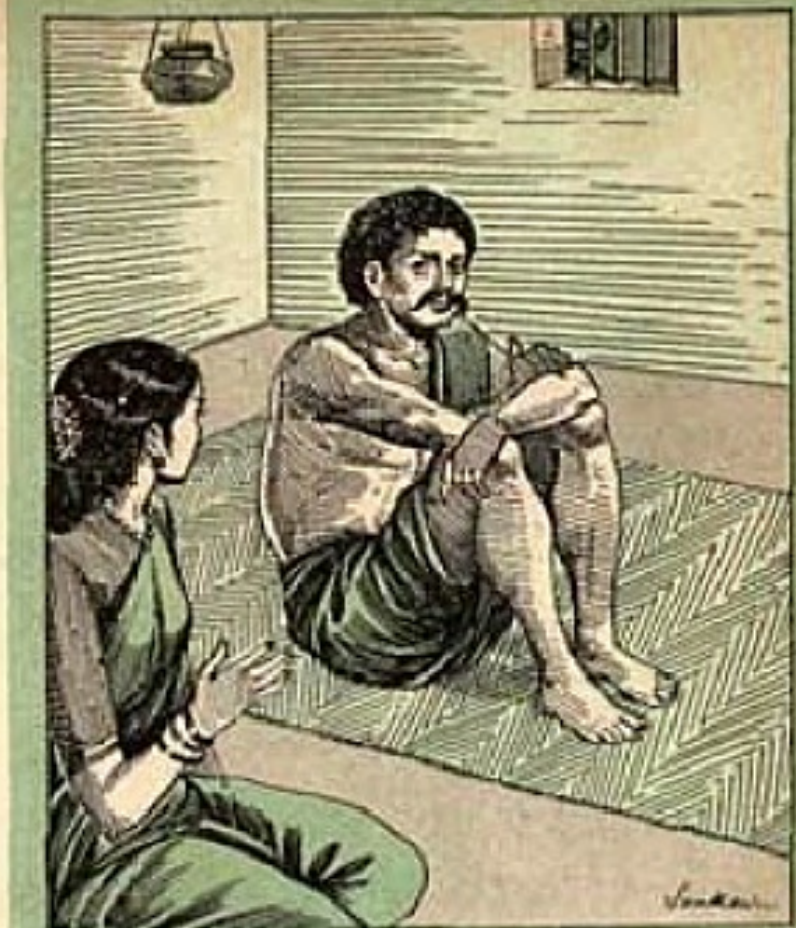
"घर के पिछवाड़े में देखो, नीचे रख रखी हैं।" रामसुख की पत्नी ने कहा।

यह पता लगते ही बनवारीलाल ने वे पुरानी चप्पलें खोज निकालीं और उनको लेकर, वह कस्बा वापिस चला। रास्ते में उसने उन्हें एक बड़ी झाड़ी में फेंक दिया।

उसने यह किया ही था कि तुरत चार चोर आये, उसे पकड़कर उसकी चार अंगुलियों की चार अंगूठियाँ लेकर चम्पत हो गये।

अगले दिन न्यायस्थल पर बनवारीलाल की तरह रामसुख भी खाली हाथ हाज़िर हुआ। जब न्यायाधिकारी ने पूछा—"क्या तुम अपनी पुरानी चप्पल लाये हो?" तो उसने कहा—"वे कल शाम तक पिछवाड़े में थीं। पर सवेरे बहुत खोजने पर न मिलीं।"

न्यायाधिकारी ने जब एक सिपाही को इशारा किया, तो वह एक जोड़ी चप्पल लाया। रामसुख ने उन्हें पहिचान कर आश्चर्य में कहा—"वे चप्पल मेरी ही हैं।"

उन्हें देख बनवारीलाल का चेहरा उतर गया। बनवारीलाल से न्यायाधिकारी ने कहा—"जिस आदमी ने इस चप्पल को पौधों में फेंका था, उसे चोरों ने लूटा भी था, आपकी कोई चीज़ तो चोरी नहीं गई?"

बनवारीलाल ने हकलाते हुए कहा—"नहीं तो।"

न्यायाधिकारी ने पुड़िया में से अंगूठियों को निकालकर पूछा—"ये अंगूठियाँ आपकी मालूम होती हैं? इन्हें ही चोरों ने पुरानी चप्पल के चोर के पास से लिया था।"

बनवारीलाल की चोरी का भेद सबको मालूम हो गया। नई चप्पल चुराने के कारण जुरमाना और पुरानी चप्पल चुराने के कारण दुगना जुरमाना देने पर भी हमेशा के लिए उसका नाम चप्पल चोर पड़ गया।

रामसुख जैसे भी हो, अपनी नई चप्पल ले गया।

गिरवी रखी रसौली

जपान देश में पर्वतों पर एक जंगल में एक छोटा गाँव था। उस गाँव में सब पेड़ काटकर, जिन्दगी बसर करते थे। उस गाँव में दो की कनपटी पर बड़ी बड़ी रसौलियाँ थीं। एक की बाईं तरफ़ दूसरे की दाईं तरफ़। इसलिए बाकी उनको "दाईं कनपटी" और "बाईं कनपटी" कहकर चिढ़ाया करते।

"दाईं कनपटी" सज्जन था। स्नेहपात्र था। उसमें ईर्ष्या बिल्कुल न थी। कनपटी पर रसौली थी, पर चूँकि उसकी कोई दवा न थी इसी पर तसल्ली करके, शादी करके, पत्नी के साथ आराम से गृहस्थी निभा रहा था।

मगर "बाईं कनपटी" ऐसा न था। उसको सिवाय "दाईं कनपटी" के गाँव में सब से ईर्ष्या थी। फिर सब की मदद भी माँगा करता। जो कुछ चाहता, उसे दूसरों से माँगता। तिस पर भी वह सब से चिढ़ा रहता। "बाईं कनपटी" कभी कभी यह सोचकर "दाईं कनपटी" से भी जलता कि वह उसकी तरह अकेला न था और घर का सारा काम स्वयं नहीं कर रहा था। परन्तु जितना वह औरों से चिढ़ता था उससे नहीं चिढ़ता था। यदि कभी झाड़ू वगैरह की जरूरत होती तो वह "दाईं कनपटी" के घर जाया करता। चीज़ लेकर साथ यह भी कहा करता—"चीज़ तो आपने दे दी, पर काम तो मुझे ही करना होगा, बिना स्त्री का जीवन जो है।"

एक दिन "दाईं कनपटी" अपना आरा, कुल्हाड़ी, रस्सी लेकर लकड़ी काटने चढ़ाई

रामचन्द

के जंगल में गया। वह जितनी लकड़ी ढो सकता था, उतनी का गठ्ठर बनाकर अपनी चीजें लेकर जब गाँव की ओर नीचे जा रहा था, तो यकायक मूसलधार वर्षा होने लगी। यह मामूली वर्षा न थी। जोर का तूफ़ान था। पहाड़ पर कहीं कहीं बिजलियाँ भी गिरी थीं। आकाश में बिजली चमक रही थी। खूब वर्षा हुई।

"दाईं कनपटी" झट घर में घुस जाना चाहता था, पर सिर पर बड़ा-सा गठ्ठर था। तब भी उसने भागना शुरु किया। पेड़ गिर रहे थे। उसे डर लगा कि वह घर न पहुँच सकेगा। परन्तु पास ही एक बड़े देवदार के पेड़ में सौभाग्यवश उसको एक खोल दिखाई दिया। वह झट उसमें घुस गया। खोल बड़ा था और अन्दर सूखा था। उसने अपना गठ्ठर उतारा। कुल्हाड़ी वगैरह एक तरफ़ रखी। उसने एक नींद भी पूरी की।

शाम, तूफ़ान कुछ थमा। यह सोच कि तब निकला जा सकता था, "दाईं कनपटी" अपना गठ्ठर सिर पर रखकर, चीज़ें लेकर, घर की ओर चल पड़ा। अन्धेरा होने से पहिले ही वह जंगल ही से निकल जाना चाहता था, इसलिए वह तेज़ी से चलने लगा। परन्तु रास्ते में ही अन्धेरा हो गया। इस डर से कि कहीं वह रास्ता न भटक जाये, उसने यह देखने के लिए कि रास्ता कहाँ तक दिखाई देता है, सिर उठाया। उसे दूरी पर एक मशाल दिखाई दी। उसे देखकर, वह अभी सोच ही रहा था कि कौन हो सकता है, उस मशाल की बगल में एक और मशाल और उसके पीछे और भी मशालें दिखाई दीं।

उसने सोचा कि उसी के गाँव के लोग होंगे। यह सोच कि वह कहीं जंगल में

भटक गया था, इसलिए वे मशालें लेकर, उसे खोजने आ रहे थे वह जोर से चिल्लाया—"ठहरो, ठहरो, मैं आ ही रहा हूँ।" परन्तु मशालें नहीं रुकीं। न कोई जवाब ही मिला। वह फिर चिल्लाया। उसका भी जवाब नहीं मिला।

मशालें जब वापिस आयीं, तो "दाईं कनपटी" ने एक आश्चर्य की बात यह देखी कि मशालें स्वयं चली आ रही थीं। जिन्होंने उनको पकड़ रखा था, उनका कोई पता न था। सम्भव है कि वे भूत हों, पिशाच हों। उसे बड़ा डर लगा और जिस रास्ते आया था, उसी रास्ते भागने लगा। चढ़ाई का रास्ता था, इसलिए वह आसानी से भाग भी न सका। उसने सिर का गट्ठर फेंक दिया। सीधे वह पेड़ के खोल के पास पहुँचा और उसमें जा घुसा।

मशालें भी, उस पेड़ के पास ही खाली जगह आकर रुकीं। तब मशाल पकड़नेवाले कुछ कुछ अस्पष्ट रूप से दिखाई दिये। एक के मेंढ़क के पैर थे। एक के पक्षी का मुँह था। एक के हरिण के पैर थे। एक के भालू का सिर था। सब में मनुष्य और पशु लक्षण मिले हुए थे।

"आग बनाओ।" आवाज़ सुनाई दी।

"गनीमत है सूखी लकड़ियाँ मिल गईं, कोई लगता है, उन्हें फेंक गया है।" एक और आवाज़ सुनाई दी। जल्दी ही आग तैय्यार हो गई। वे सब आकृतियाँ आग को घेर कर खड़ी हो गईं और मशालें उठाकर नाचने लगीं। उनको यों मज़ा करता देख "दाईं कनपटी" का भय जाता रहा। उनको देखकर ऐसा लगता था कि वे किसी को हानि नहीं पहुँचायेंगे। वह खोल में से बाहर निकला। "आदमी, आदमी...." वे आनन्द में चिल्लाने लगे।

"कौन हो तुम! क्या काम करते हो?" एक आकृति ने पूछा।

"मैं लकड़हारा हूँ। मेरी काटी लकड़ी ही जलाकर, आप आग सेंक रहे हैं। मेरा नाम "दाईं कनपटी" है। मेरी दाईं कनपटी पर रसौली देखिये।" "दाईं कनपटी" ने कहा।

"यह रसौली कितनी सुन्दर है।" एक आकृति ने कहा।

"तुम कौन हो?" "दाईं कनपटी" ने पूछा। उसे अचरज हुआ कि कि वे उसकी रसौली देखकर खुश थे।

"हम भूत, प्रेत, पिशाच आदि नहीं हैं। हम वैसे इस लोक के ही नहीं हैं।" उन आकृतियों ने कहा।

"तुम्हारा नृत्य बड़ा सुन्दर है। हम लोगों का लकड़ी काटने का नृत्य कुछ और तरह का ही होता है।" "दाईं कनपटी" ने कहा।

"लकड़ी काटने का नृत्य! ज़रा देखें तो हम भी मज़ा लेंगे।" उन आकृतियों ने कहा।

"दाईं कनपटी" एक हाथ में कुल्हाड़ी और एक हाथ में आरा लेकर, उनसे टहनी

और तने काटने का अभिनय करने लगा। उसने वह नृत्य बड़े सुन्दर ढँग से किया।

वे आकृतियाँ बड़ी खुश हुईं। उन्होंने तालियाँ और सीटियाँ बजाकर "दाईं कनपटी" को प्रोत्साहित किया।

"बहुत सुन्दर नृत्य है, हमें भी सिखाओ।" वे चिल्लाये।

"बस, बस, सवेरा होने जा रहा है। अब हमें जाना है।" मनुष्य के मुखवाली आकृति ने कहा।

"कल यहीं आना, ज़रूर आओगे न?" शेष आकृतियों ने कहा।

"आऊँगा....आकर, तुम्हें हमारा नृत्य सिखाऊँगा।" "दाईं कनपटी" ने कहा।

"यूँही बातें न करो। अपनी कोई चीज़ रेहन रखकर बात करो।" मनुष्य के मुख की आकृति ने कहा।

"उसकी कुल्हाड़ी और आरा ले लो।" बाकी आकृतियों ने कहा।

"उन चीज़ों की क्या यह परवाह करेगा! लो, यह रसौली ले लें।" मनुष्य के मुखवाले ने कहकर, लकड़हारे की दाईं कनपटी को छुआ, उसके हाथ में वह

"बाईं कनपटी" वहाँ पर आया। जब उसने देखा कि "दाईं कनपटी" की रसौली चली गई थी, तो उसे बड़ी असूया हुई। सब सुनने के बाद उसने "दाईं कनपटी" से कहा—"आज रात मुझे जाने दो। मैं भी अपनी रसौली निकलवा लूँगा।"

"तो आज रात तुम जाओ। पर मैंने वचन दिया था कि मैं आऊँगा, उनसे कहना कि मैं कल रात आऊँगा। नहीं, तो अच्छा नहीं होगा।" "दाईं कनपटी" ने कहा।

उस दिन रात को "बाईं कनपटी" जाकर, पेड़ के खोल में बैठ गया। अन्धेरा होते ही आग जलाकर, वह उन आकृतियों की प्रतीक्षा करने लगा। आकृतियाँ आधी रात तक नहीं आयीं। उन्होंने आते ही कहा—"हमारे लिए किसी ने आग बनाई है, पर जो आया है, वह "दाईं कनपटी" नहीं है।" जब वे आग के चारों ओर नाचने लगे, तो "बाईं कनपटी" को खोल में से निकलते हुए डर लगा।

नृत्य समाप्त होते ही वह खोल में से निकला और उन विचित्र आकृतियों को दिखाई दिया।

रसौली आ गई। इतने में वे सब आकृतियाँ अदृश्य हो गईं।

"दाईं कनपटी" ने अपने दोनों गालों का सहलाया। दोनों तरफ़ एक ही सा चिकना-चिकना था। वह रसौली, जो सालों से थी, इस तरह चली गई, मानों किसी ने जादू फूँक दिया हो। उसे ही विश्वास नहीं हो रहा था कि यह कैसे हो गया था। वह घर की ओर गया।

जब वह घर पहुँचा, तो उसकी पत्नी को और भी आश्चर्य हुआ। उसने जो कुछ गुजरा था, उसे बताया। उसी समय

"तुम कौन हो! "दाईं कनपटी" क्यो नहीं आया! उसने आने का वचन भी दिया था।" मनुष्य के मुखवाले ने कहा।

"कल आने के लिए उसने कहा है।" "बाईं कनपटी" ने डरते-डरते कहा।

"दाईं कनपटी ने वादा किया था कि वह हमें लकड़ी काटनेवाला नृत्य सिखायेगा।" मनुष्य के मुखाकृति ने कहा।

"वह नृत्य मैं भी जानता हूँ। मैं सिखाऊँगा।" "बाईं कनपटी" ने कहा।

"देखें तो...." आकृतियों ने कहा।

"बाईं कनपटी" ने लकड़ी काटने का नृत्य शुरु करके कहा—"यह देखो, कुल्हाड़ी यूँ आगे करो। यों एक कदम आगे रखो...."

"ये सब बाद में देखेंगे, पहिले नृत्य करके दिखाओ। हम सब सीख जायेंगे।" मनुष्याकृति ने कहा। "बाईं कनपटी" ने नृत्य किया। परन्तु आकृतियाँ नहीं हिलीं। न उन्होंने तालियाँ बजाईं, न सीटियाँ ही।

"तुम्हारा नृत्य अच्छा नहीं है। "दाईं कनपटी" ने बहुत अच्छा किया था। परन्तु उसने वादा करके धोखा दिया। यह लो, गिरवी रखी रसौली उसे ही दे दो।" कहते हुए उसने उस रसौली को "बाईं कनपटी" की दाईं कनपटी पर रखा। उसके दाईं तरफ़ भी एक रसौली आ गई।

"यह रसौली मुझे नहीं चाहिए। कल जब "दाईं कनपटी" आये, तो उसे ही दे देना।" बाईं कनपटी ने शोर किया।

"सवेरा हो गया है, चलो चलो।" कहते कहते अदृश्य हो गये।

विजय घोष

कभी विभाण्डक नाम का राजा हुआ करता था। वह बड़ा बल्वान था। युद्ध के लिए वह हमेशा लालायित रहता। यही नहीं, वह युद्ध विद्या में भी चतुर था।

वह छोटी मोटी बातों पर, आसपास के राजाओं को युद्ध के लिए उकसाता। युद्ध करके, अपने शत्रुओं को परास्त करता। प्रायः हर महीने वह कोई न कोई आक्रमण करता, उसकी विजय दुन्दुभी हमेशा बजती रहती।

यदि किसी महीने कोई युद्ध नहीं होता, तो विभाण्डक अपनी सेना लेकर, वन में जाता, और शिकार करके, विजय घोष करता, घर आता।

उसे हमेशा विजय घोष सुनने सुनाने का नगर में विजयोत्सव मनाने का बड़ा शौक था।

उसकी विजय दुन्दुभी बड़ी प्रचण्ड थी। यही नहीं, विजय उद्घोष के लिए उसके पास ढपली और ढोल वगैरह भी थे।

इन सब के कारण, जो शोर होता, वह बड़ा भयंकर होता। दिन रात इस शोर के कारण, गरीबों के झोंपड़े ढह जाते थे। दीवारों में दरारें पड़ जातीं। लोग पागल हो जाते। कई को तो नीन्द ही न आती थी।

पर इसके कारण सबसे अधिक नुकसान कुम्हारों का हुआ। जब उनके घरों के पास, विजय का शोर मचाता, राजा युद्ध से लौटता, तो उनके कच्चे बर्तन टूट जाते। उनकी मेहनत फिज़ूल जाती। हर महीने इस तरह की कोई न कोई बात होती रहती।

ऐसी हालत में, वे मन्त्री के पास जाकर रोये धोये कि विजय नाद के कारण वे अपनी वृत्ति नहीं कर पा रहे थे। मन्त्री ने यह आश्वासन देकर उनको भेज दिया कि राजा से इस विषय में बात करेगा। बाद में उसने राजा तक उनका रोना धोना पहुँचा भी दिया।

राजा ने मन्त्री की बात सुनकर, क्रुद्ध होकर कहा—"इन कुम्हारों के लिए क्या मैं विजय निनाद बन्द करवा दूँ! यदि वे यह पेशा नहीं कर पाते हैं, तो कोई और पेशा करें। नहीं, तो देश छोड़कर चले जाने के लिए कहो।" मन्त्री ने कुम्हारों से यह बात बताकर कहा—"यदि, तुमने फिर ऐसी कोई बात मुख से निकाली तो राजा तुम्हें चीरकर रख देंगे। जाओ।'

कुम्हार हताश हो गये। वे एक साथ देश से निकल गये और एक जगह अपना पेशा करने लगे।

पर यह समस्या इससे समाप्त नहीं हुई। उन लोगों के लिये रहना मुश्किल हो गया, जो मिट्टी के बर्तनों का उपयोग करते थे। घड़े वगैरह न हों, तो वे न
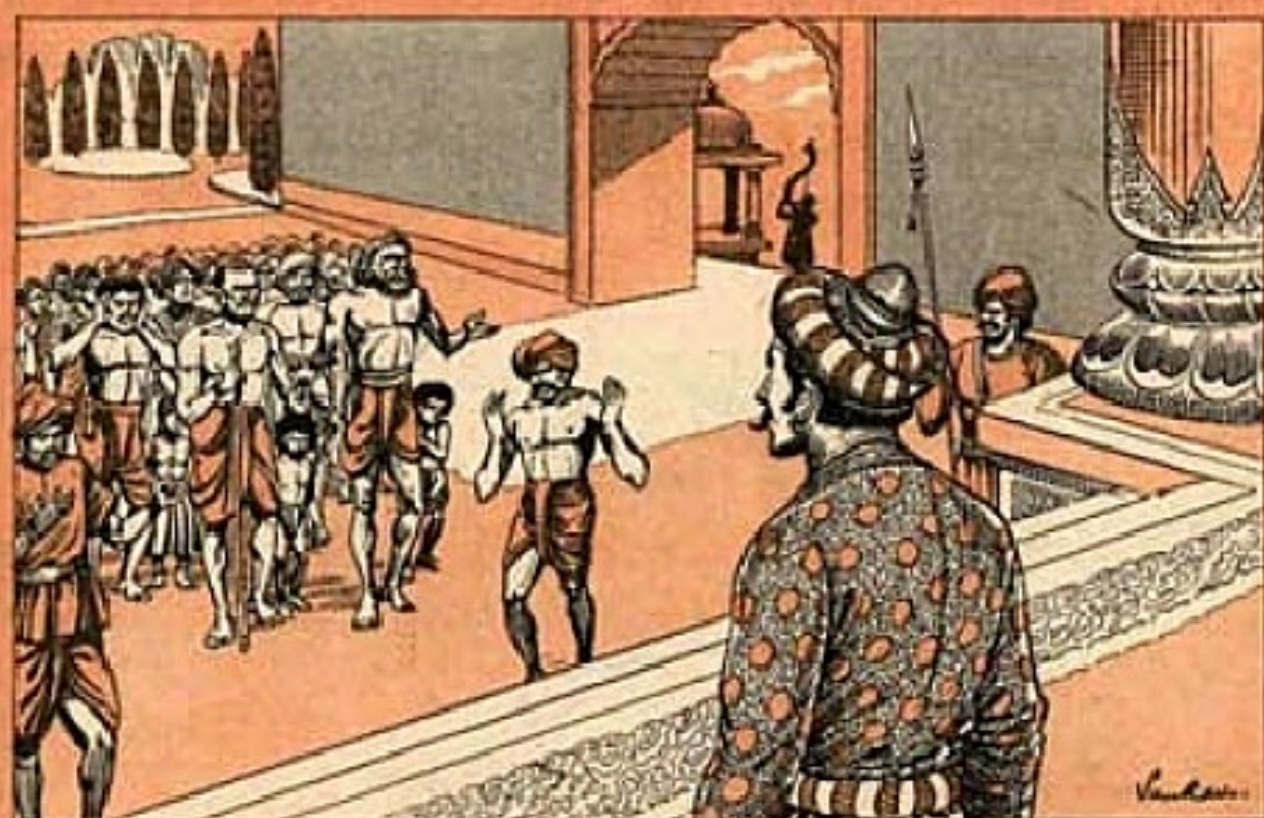
पानी ही ला सकते थे, न खाना पका सकते थे। इस तरह कई को देश छोड़कर जाना पड़ा।

कुम्हारों के न होने के कारण राजा के वैद्यों ने भी यह अनुभव किया जैसे उनके हाथ गिर गये हों। क्योंकि दवाइयाँ बनाने के लिये उनको मिट्टी के बर्तनों की जरूरत थी; दीपों की जरूरत थी; बिना मिट्टी के बर्तनों के उनका गुज़ारा सम्भव न था।

राजा न जानता था कि देश से कुम्हारों के चले जाने के कारण राज्य में कितनी हानि और असुविधा हो रही थी। फिर उसे युद्ध करने का मौका मिला। वह जयभेरी बजाता युद्ध में गया। युद्ध में उसे विजय तो मिली, पर घायल होकर वह राजमहल वापिस आया।

राजा के घावों को ठीक करने के लिए वैद्यों को बुलाया गया। परन्तु उनके पास आवश्यक औषधियाँ न थीं। "महाराज, चूँकि हमें घड़े, मिट्टी के बर्तन नहीं मिल रहे हैं, इसलिए हम औषधियाँ नहीं बना पा रहे हैं। हमारी वैद्य वृत्ति कुम्हारों के साथ आधी जाती रही।" वैद्यों ने कहा।

चिकित्सा न होने के कारण राजा के घावों के कारण बिस्तर पकड़ना पड़ा। उनकी हालत बिगड़ने लगी। उस हालत में वह चेता और उसने फिर कुम्हारों को बुलवा भेजा। उनके आने पर फिर बर्तन बने, उन बर्तनों में वैद्यों ने दवाइयाँ बनाईं और राजा की चिकित्सा की।

उसके बाद, काफ़ी दिनों तक उस देश में विजय घोष नहीं सुनाई दिया।

सारी लंका को दग्ध करके हनुमान अशोक वन में सीता के पास आया। उनको नमस्कार करके उसने कहा—"मेरा सौभाग्य है कि आपको कोई हानि नहीं हुई। राम जल्दी ही वानर और भल्लूक सेना को साथ लेकर आयेंगे।"

वह उनसे विदा लेकर अरिष्ट पर्वत पर चढ़कर समुद्र की ओर देखकर उसने अपना शरीर बड़ा किया। जब उसने ज़ोर से उस पहाड़ को कुचला तो उस पहाड़ के पत्थर चूरे चूरे हो गये। उस पर रहनेवाले जन्तु भय से इधर उधर भाग गये। हनुमान उस पार जाने के लिए आकाश में उठा। वह मेघों में कभी दिखाई देता, तो कभी लुप्त हो जाता। उसने समुद्र को इस तरह पार कर लिया, जिस तरह कि जहाज़ पार किया करते हैं। उसे जल्दी ही कुछ दूरी पर महेन्द्र पर्वत दिखाई दिया। उसे देखते ही उसने उत्साह में गर्जन किया।

अंगद आदि वानर तो इसी प्रतीक्षा में थे कि वह कब वापिस आता है, इसलिए उसका गर्जन सुनकर वे बहुत खुश हुए। सबमें बड़े जाम्बवन्त ने वानरों को एकत्रित करके कहा—"हमारा हनुमान काम करके आ रहा है। उसकी आवाज़ सुनकर यह ही अनुमान किया जा सकता है।"

सीता को देखा था, और बानर शेरों की तरह गर्जन करने लगे। अगर कुछ चिल्लाते तो बाकी उसका जवाब देते। और कई पत्थरों पर कूद कूदकर उसे छू रहे थे।

तब अंगद ने कहा—"हनुमान, तुमने सौ योजन समुद्र को इस तरफ़ से उस तरफ़ पार करके यह दिखा दिया है कि तुम-सा कोई नहीं है। तुमने हमारे मान की रक्षा की, यही नहीं तुमने सीता को भी देखा।" सब वानर हनुमान की बातें सुनने के लिए आतुर थे।

जाम्बवन्त ने हनुमान से कहा—"सीता तुम्हें कैसे दिखाई दी! वह वहाँ कैसे हैं! उसके प्रति रावण का कैसा व्यवहार है! जो कुछ गुज़रा है उसे बिना छुपाये बताओ। फिर उसमें से राम को क्या बताया जा सकता है और क्या नहीं बताया जा सकता हम बाद में सोचेंगे।"

हनुमान ने यों कहना शुरु किया। "तुमने मेरा जाना तो देखा ही था। कुछ दूर जाने पर, एक सोने के पर्वत का शिखर मेरे रास्ते में आया। उसने मुझसे प्रेम पूर्वक बात करते हुए कहा कि उसका नाम मैनाक था और मेरे पिता वायुदेव ने

वानर आनन्द में उछल कूद करने लगे। कुछ पेड़ों पर चढ़ गये और टहनियाँ इस तरह हिलाने लगे जैसे वे उसे बुला रहे हों। इतने में हनुमान आकर महेन्द्र पर्वत पर उतरा। वानर ने जोश में उसे घेर लिया। उसे फल और जड़ियाँ दीं।

हनुमान ने जाम्बवन्त जैसे प्रमुख और युवराज अंगद को नमस्कार करके कहा—"मैंने सीता को देख लिया है।" उसने अंगद का आलिंगन किया। सब के बैठने के लिए महेन्द्रगिरि पर एक सुन्दर स्थल देखा। हनुमान के यह कहते ही कि उसने

उसकी इन्द्र से रक्षा की थी। मैनाक से विदा लेकर जब मैं आगे बढ़ा तो सर्पमाता सुरसा देवी ने मेरे सामने आकर धमकी दी कि वह मुझे निगल जायेगी। मैं अंगुल के बराबर अपना शरीर बनाकर उसके अन्दर घुसा और बाहर निकल गया।

इस प्रकार हनुमान ने कहना शुरु किया, फिर उसने सविस्तार बताया कि कैसे अन्धेरा होने के बाद लंका नगर में पहुँचा था। लंका को छानने पर, अशोक वन में एक शिंशुपा वृक्ष के नीचे कैसे सीता दिखाई दी थी। आखिर उसने कहा—"इसमें सन्देह नहीं है कि सीता महा पतिव्रता है। वह राम के लिए ही जी रही है और बहुत कष्टों को झेल रही है। जब मैंने अकेले ही सारी लंका को भस्म कर दिया है तो क्या हम सब मिलकर रावण और उसकी सेना को खतम न कर सकेंगे! हम में कौन कम है! जाम्बवन्त, अंगद, पनस, नील, अजेय कितने ही लोग हममें हैं। यही अच्छा है कि हम रावण को मारकर सीता को राम के पास पहुँचा दें।"
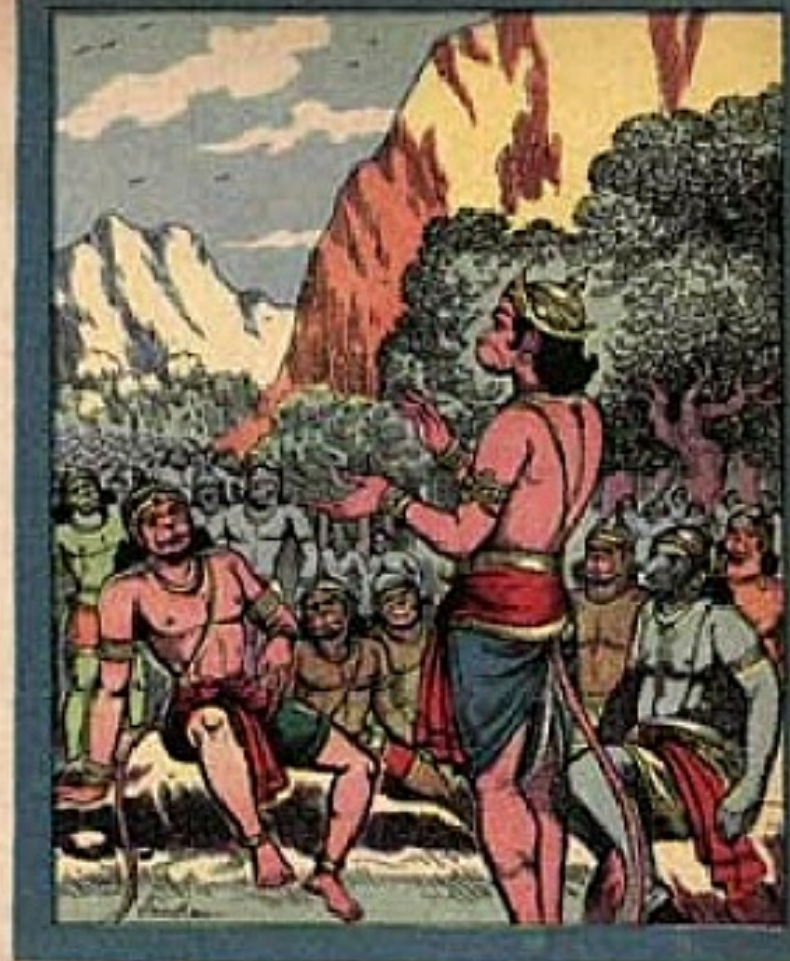
अंगद ने हनुमान का समर्थन करते हुए कहा—"सीता को देखकर भी उनको राम के पास न ले जाना हमारे लिए अनुचित है। राम के पास जाकर यह कहना ठीक न होगा कि हमने सीता को देखा तो है, पर हम उनको लाये नहीं हैं। यही नहीं, हनुमान ने वहाँ के वीर राक्षसों को मार ही दिया है। सिवाय सीता को लाने के हमारे लिए कोई और बड़ा काम नहीं है।"

यह सुनकर जाम्बवन्त ने कहा—"युवराज, तुम्हारी बात अच्छी है। परन्तु

इस विषय में राम का क्या विचार है यह जानकर ही हमें कार्यवाही करनी पड़ेगी।" यह सलाह अंगद ही नहीं, बाकी वानर भी मान गये।

जो काम सोचा था, वह चूँकि हो गया था, राम को कहने के लिए कुछ समाचार थे, युद्ध की भी सम्भावना थी, इसलिए वानर खुशी में उछलते कूदते वापिस निकल पड़े। वे कूदते फाँदते मधुवन में पहुँचे। वहाँ अंगद की अनुमति पर उन्होंने शहद के छत्तों से शहद पिया। खुशी में उन्होंने तरह तरह के खेल भी खेले। चिल्लाये। एक दूसरे का पीछा किया। पेड़ों पर भागे।

मधुवन का रक्षक दधिमुख था, सुग्रीव का मामा। जब उसने देखा कि वानरों ने केवल शहद ही न पिया था, बल्कि पेड़ों और फलों को तोड़ दिया था, तो उसने उनको गुस्से में वन छोड़कर जाने के लिए चिल्लाया। पर वानरों ने उसकी बात को अनसुना कर दिया। उसने कुछ को पीटा तो कुछ को समझाया। कुछ को मनाया। परन्तु सबने उसको छेड़ा। कई ने उसको काटा भी।

हनुमान ने वानरों को प्रोत्साहित करते हुए कहा—"जितना चाहो उतना शहद पीओ। देखें, कौन तुम्हें रोकता है।"

अंगद ने हनुमान की बात का समर्थन करते हुए कहा—"यदि हनुमान ऐसा काम भी करने के लिए कहेगा, जो नहीं करना चाहिए, मैं कर दूँगा। उस हालत में अच्छा काम करने के लिए क्यों झिझका जाये!" वानरों ने अंगद की बात पर खुशी में तालियाँ बजायीं। शहद पी पाकर उन्होंने ऊधम मचाया। मधुवन के पहरेदारों को उन्होंने पकड़कर बाँध दिया। फल

खा लिये। कई ज़ोर से गरजे, तो कई धीमे से चीखे और कई सो गये।

मधुवन को नष्ट होता हुआ देख, दधिमुख ने अपने सैनिकों को इकट्ठा किया। पेड़, पत्थर आदि अस्त्रों से अंगद के वानरों की सेना पर आक्रमण किया। अंगद नशे में था, उसने यह भी न सोचा कि वह अपने नाना से लड़ रहा था। उसने उसे ज़ोर से धक्का दिया। दधिमुख बेहोश हो गिर गया।

कुछ देर बाद उसे होश आया। उसने अपने हाथ के पेड़ से खूब नशे में आये हुए वानरों को भगाया। फिर उसने अपने लोगों से कहा—"इन सबको यहीं पड़े रहने दो। मैं जाकर सुग्रीव को बताऊँगा, यहाँ क्या गुज़रा है, तब सुग्रीव ही उनके सिर कटवा देगा।" कहकर वह जल्दी जल्दी सुग्रीव के पास गया।

सुग्रीव ने अपने मामा को देखकर आश्चर्य से पूछा—"क्या बात है?"

"उस मधुवन को जहाँ देवताओं का प्रवेश भी निषिद्ध है अंगद आदि ने आकर ध्वंस कर दिया है। जब पहरेदारों ने उन्हें जाने के लिए कहा, तो उन्हें

मारा पीटा, उनको सिर के बल लटका दिया। मधुवन का सारा शहद भी खा गये।" दधिमुख ने सुग्रीव से कहा।

उस समय लक्ष्मण वहाँ आया और दधिमुख को देखकर उसने कहा—"यह कोई फरियाद करता मालूम होता है।"

"हमारे लोगों ने, जो सीता को ढूँढ़ने गये थे, मधुवन में आते ही सारा वन ध्वंस करके शहद पी पा लिया। बिना काम पूरा किये वे उस तरह कभी नहीं करेंगे। वे ज़रूर सीता को देखकर आये होंगे। जो यह कर सकता था, वह

तो वानरों का नशा उतर चुका था। उसने अंगद से कहा—"अनजाने हमने तुमको रोका टोका था। अनजाने यह गल्ती हो गई है। जब मैंने जाकर यह तुम्हारे चाचा से कहा, तो वह खुश होकर तुम सब को बुला रहा है।"

अंगद ने अपने लोगों से कहा—"अब हमने यहाँ विश्राम कर ही लिया है, इसलिए चलो अब चलें। हमारे आने के बारे में राम और लक्ष्मण को पहिले ही माऌम हो गया है।" अंगद और उसके साथी आकाश में कूदे। सुग्रीव को भी किष्किन्धा के पास उनका किया गया गर्जन सुनाई दिया। उसने खुशी में अपनी पूँछ फैलायी। इतने में वानर अंगद और हनुमान को सामने रखकर राम के पास आये।

हनुमान उनके साथ है भी। काम पूरा होने की खुशी में ही उन्होंने पहरेदारों को बाँध दिया होगा...." सुग्रीव ने कहा।

सुग्रीव का अनुमान सुनकर राम और लक्ष्मण बड़े आनन्दित हुए। सुग्रीव ने दधिमुख से कहा—"उनसे कहना कि मैं यह सुनकर बड़ा खुश हुआ कि उन्होंने मधुवन का सारा शहद खा लिया था। उनके लिए मैं, राम और लक्ष्मण प्रतीक्षा कर रहे हैं, उनको जल्दी आने के लिए कहो।"

दधिमुख, जब तीनों को प्रणाम करके आकाश मार्ग से मधुवन वापिस आया,

"वानरो! सीता कहाँ है! मेरे बारे में वह क्या सोच रही है! सब मुझे सविवरण बताओ।" राम ने वानरों से पूछा। वानरों ने हनुमान को आगे धकेला।

हनुमान ने राम को जो कुछ गुजरा था, वह बताया। सीता की दी हुई चूड़ामणि को राम के हाथ में रखकर कहा—"राम चित्रकूट में जब आये थे
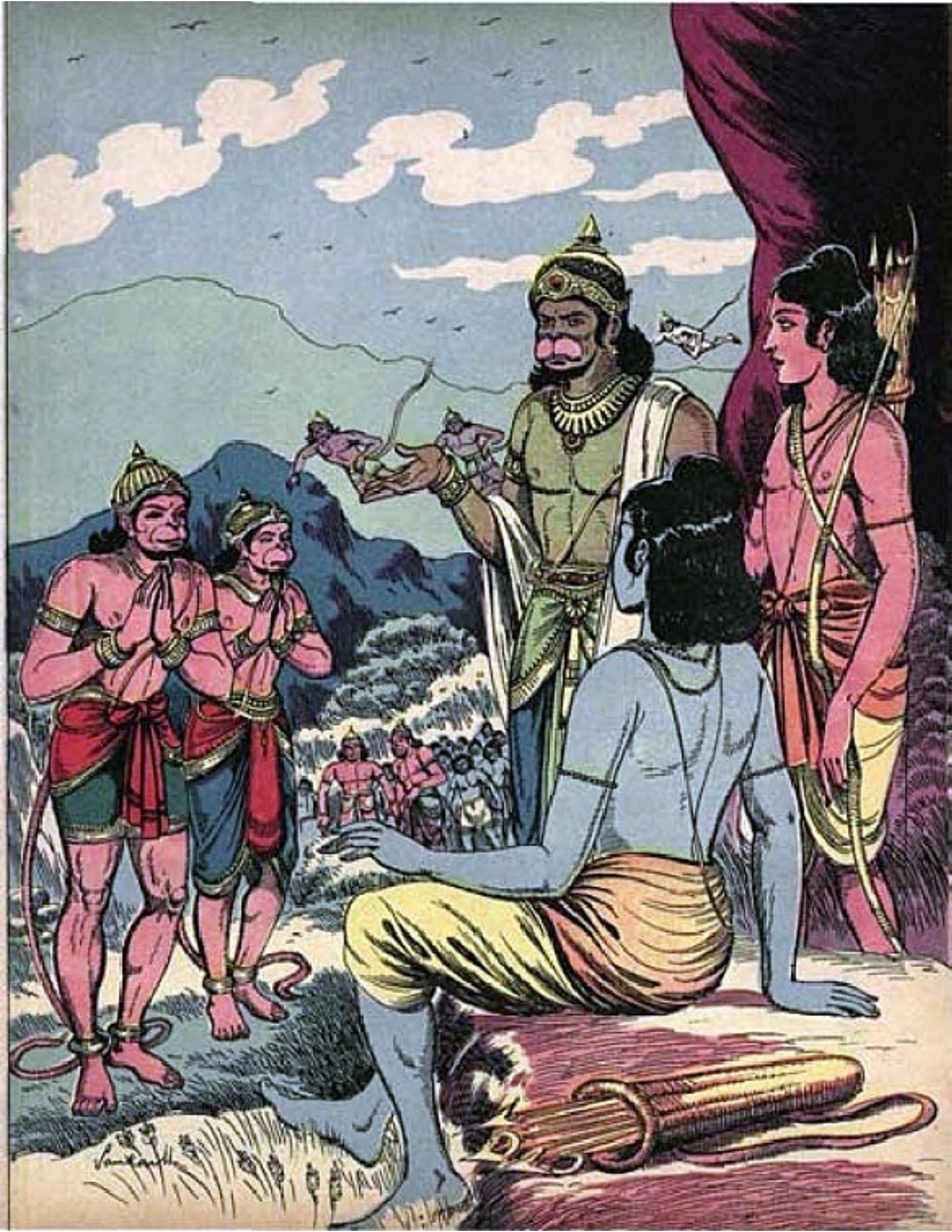
और जो कुछ कौव्वे ने किया था, वह सब आपको याद दिलाने के लिए सीता ने कहा था। उन्होंने यह भी बताया है कि बस अब उनके लिए एक महीना समय ही रह गया है। वह बड़ी उद्विग्न हैं। समुद्र पार करके लंका में पहुँचने की सोचिये।"

सीता की दी हुई चूड़ामणि को देखते ही राम और लक्ष्मण का दुख काबू में न रह सका। राम ने शोकातुर होकर कहा—"बिना सीता के दिखाई दिये इस चूड़ामणि के दिखाई देने से अधिक दुख का कारण क्या होगा? क्या सीता केवल एक मास मात्र ही जीवित रहेगी! जब यह मालूम हो गया हो कि वह कहाँ है, तब यहाँ कैसे रहा जाय! उन भयंकर राक्षस स्त्रियों के बीच में सीता कब तक रहेगी!" वह सोचने लगे।

जो कुछ सीता ने कहा था, उसने हनुमान के मुँह सुना। हनुमान ने सब सुनाकर कहा—"उन्होंने आपको सेना के साथ आकर, रावण को मारकर उनकी रक्षा करने के लिए कहा है। उसके लिए मुझे प्रोत्साहित करने के लिए भी कहा है। उन्हें यह सन्देह हो रहा है कि शायद वानर समुद्र पार करके न आ सकें। सीताजी को, जो यह सोच रही थीं कि उनका किसी तरह विमोचन नहीं होगा, मैंने तरह तरह से आश्वासन दिया। मैंने कहा कि मुझसे बढ़कर योद्धा सुग्रीव के पास सैकड़ों हैं। मैंने उनको ढ़ाढ़स दिया कि जल्दी ही रावण आदि का नाश हो जायेगा और वह अपने पति के साथ अयोध्या वापिस जा सकेंगी।"

[सुन्दरकाण्ड समाप्त]

आपद्रक्षक

एक दिन पन्नालाल पास के गाँव में किसी बन्धु की मदद करने गया। जब वह शाम को वापिस आ रहा था, तो रास्ते में उसने देखा कि एक गाँव में आग लग रही थी। उस गाँव के मुखिया का घर जल रहा था। लोग चिल्लाते इधर उधर भाग रहे थे। वे घड़ों में पानी लाकर आग बुझा रहे थे।

और कई जलते घर में से समान खींचकर बाहर पहुँचा रहे थे।

घर के पीछे घरवाली चिल्ला रही थी। "अरे, अरे....बच्चा, रसोई घर में रह गया है। उसे बाहर निकालो।" पर उसका चिल्लाना कोई नहीं सुन रहा था।

जब चिल्लाना सुन पन्नालाल उधर गया, तो घर के पिछले भाग से लड़के का रोना सुनाई दिया।

तुरत पन्नालाल लपटों में से अन्दर गया और लड़के को उठाकर बाहर चला आया।

ज्योंहि उसने बाहर कदम रखा, तो मुखिया के एक नौकर ने पन्नालाल के हाथ से लड़के को गोदी में लेकर घर के सामने खड़े हुए मालिक को दिखाकर कहा—"बाबू, जलते घर में फंस गये थे। यदि मैं जाकर न निकालता, तो न मालूम क्या होता।"

ग्रामाधिकारी ने अपनी कृतज्ञता दिखाते हुए कहा—"मुझे तुमने पुत्र भिक्षा दी है। तेरा ऋण कितने जन्मों में चुका पाऊँगा।" उसने अपने रोते लड़के को छाती से लगा लिया।

इस बीच पन्नालाल अन्धेरे में बड़ी मुश्किल से घर पहुँचा। उसके कपड़े जल

गये थे। शरीर भी कई जगह जल गया था। उसकी माता ने पन्नालाल को देखकर कहा—"बेटा! कहाँ जल गये हो? क्या हुआ? क्या बात है?"

पन्नालाल ने जो कुछ गुजरा था, अपनी माता को बताया।

"क्यों फिजूल के काम किया करते हो?" माँ ने अपनी लड़के को डाँटा।

"परोपकारार्थ मिदं शरीरं" गुरु ने कह रखा है। गुनगुनाते पन्नालाल ने अपना कुड़ता उतारा। उस कुड़ते में से कोई भारी चीज़ नीचे गिरी। देखा तो सोने की कमरबन्द थी। गाँव के मुखिया के लड़के की। वह खुलकर पन्नालाल के कुड़ते पर लटक रहा था। उस गड़बड़ी में, पन्नालाल ने यह न देखा था।

जब उसकी माँ जले पर दवा लगाने आयी तो उसने उससे कहा—"इसे जरा, हिफ़ाजत से रखो, उन्हें वापिस देना है।"

परन्तु तुरत वह कमरबन्द मुखिया को न दे सका, अगले दिन उन घावों के कारण पन्नालाल को बुखार आ गया। तीन चार दिन वह बिस्तरे पर रहा, तब जाकर उसकी हालत सुधरी, हाथों पर और मुँह पर जली हुई जगह दाग रह गये थे।

फिर भी दो दिन बाद पन्नालाल कमरबन्द लेकर गाँव के मुखिया के पास गया। जले हुए घर को फिर बना रहे थे और वह नौकर, जो पन्नालाल के हाथ से लड़के को लेकर मालिक से यह कह आया था कि उसने ही उसकी रक्षा की थी। वहाँ खड़ा, खड़ा, काम करनेवालों पर निगरानी कर रहा था। पन्नालाल ने उस आदमी के पास जाकर पूछा—"इस घर के लोग कहाँ गये हैं?"

"वह देखो, उस खपैरलवाले मकान में हैं। कल या परसों जब घर पूरा हो जायेगा, तो आ जायेंगे। क्यों?" पन्नालाल से नौकर ने कहा।

"कुछ नहीं, उस दिन जब यह घर जल रहा था, तो मैं इस तरफ आया था, घर से एक लड़के को उठाकर लाया था। उस लड़के को घरवाले लेकर चले गये थे। उस समय उसकी सोने की कमरबन्द, मेरे कुड़ते में रह गयी थी। उसके बारे में उसको शायद ख्याल ही न रहा। मैंने भी घर जाकर ही देखा। जलने के कारण मुझे बुखार आ गया था, इसलिए इसे देने के लिए मैं नहीं आ सका।"

यह सुनते ही नौकर का दिल थम-सा गया। यदि पन्नालाल ने जाकर, यह कमरबन्द मालिक को दी और यदि उन्होंने इस आदमी के मुख और हाथ के दाग देखे, तो वे समझ जायेंगे कि इसने ही उनके लड़के की रक्षा की थी। मालिक ने पहिले ही नौकर को अच्छा खासा ईनाम दे रखा था। अब उसे अच्छा दण्ड मिलता, इसलिए उस नौकर ने कहा—

"उसे मुझे दे दीजिये, मैं उन्हीं का आदमी हूँ।"

"क्यों भाई, जब इतनी दूर आया हूँ, तो मैं ही दे दूँगा, तिस पर सोने की चीज़ है।" पन्नालाल ने कहा।

नौकर ने पन्नालाल को अलग ले जाकर कहा—"भाई, आप मेरी रक्षा कीजिये। मैंने मालिक से यह कहकर कि मैंने ही लड़के की रक्षा की है, ईनाम भी ले लिया है। चाहें तो वह कमरबन्द अपने पास रख लें, नहीं तो मुझे दे दें। मैं आपके पैर पड़ता हूँ।"

उसकी स्थिति देखकर, पन्नालाल को दया आ गई, वह उसे सोने की कमरबन्द देकर, अपने घर चला आया।

नौकर को न सूझा कैसे उसे ले जाकर, मालिक को दे, वह सुनार के पास उसे ले गया और उसने उसे पिघलाने के लिए कहा।

दुर्भाग्यवश उस सुनार ने ही वह कमरबन्द बनाया था। उसने कमरबन्द को देखते ही बता दिया कि वह फलाने का कमरबन्द था।

उसने मुखिया के पास खबर भेजकर पूछा—"क्या आपने इसे पिघलाने के लिए नौकर के हाथ भेजा है।"

तभी लोगों को पता लगा कि वह कमरबन्द खो गया था। पर इस खुशी में कि लड़के की जान बच गई थी, वे कमरबन्द के बारे में भूल ही गये थे।

मुखिया को यह जानकर बड़ा गुस्सा आया कि उस नौकर ने ही, जिसको वह समझ रहा था कि उसने पुत्र भिक्षा दी थी, इस कमरबन्द को चुराकर अपने पास रख रखा था।

नौकर से जब पूछताछ की गई, तो सच्ची बात मालूम हो गई। लड़के की रक्षा करनेवाला नौकर नहीं, परन्तु पास के गाँव का पन्नालाल था।

मुखिया ने उस नौकर को काम से हटा दिया। पन्नालाल के घर आया। पुत्र की रक्षा की कृतज्ञता में उसने पन्नालाल और उसकी माँ को, उनके बहुत मना करने पर भी बहुत-से वस्त्र और अन्य उपहार दिये।

३०. "बिगबेन"

संसार के प्रसिद्ध घड़ियों में से एक घड़ी "बिगबेन" लंदन के पार्लियामेन्ट के भवन में है। यह सौ साल से अधिक समय से बिना किसी दोष के चल रही है। इसके डायल की ऊँचाई २३ फीट है। मिनिट की सूई १४ फीट और घंटोंकी सूई ९ फीट है।

Photo by Bhalchandra Kadne
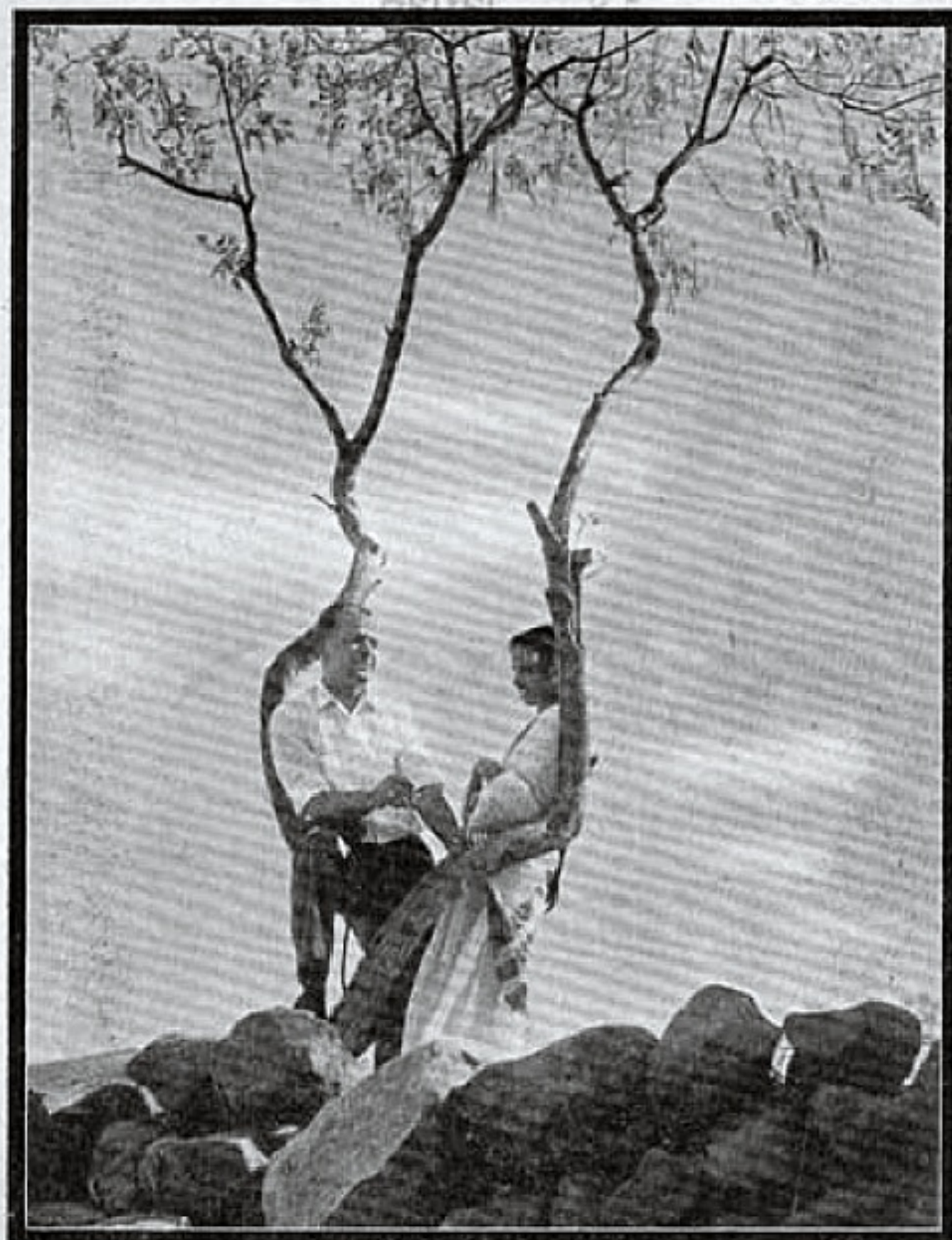
पुरस्कृत परिचयोक्ति

ये मौसम है सुहाना !

प्रेषक : बी. बी. सिंह - कोटा

Photo by Bhalchandra Kadne

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

वादा करके, भूल न जाना !!

प्रेषक:
डी. सी. सिंह - कोटा